महान कर्मवीर

# लक्ष्मण



# महान
# कर्मवीर लक्ष्मण

## शृंखला की अन्य पुस्तकें

1. सेवाव्रती महावीर हनुमान
2. अवनती नाशक श्रीकृष्ण


**शाखाएँ**

**बैंगलोर** : आवास न॰ 6/2, III मेन रोड, एस॰के॰ गार्डेन, बेन्सन टाउन पोस्ट, बैंगलोर-560046 दूरभाष : 080-23534673

**चेन्नई** : 10, हंटर्स रोड, प्रथम तल, चुलाई, चेन्नई-600112 दूरभाष : 044-25322333

**जयपुर** : 113, इंद्रा कालोनी, बनी पार्क, जयपुर-322016 दूरभाष : 0141-2282440

**कोलकाता** : 4/21, पोद्दार नगर, कोलकाता-700068 दूरभाष : 98301-30348

# महान
# कर्मवीर लक्ष्मण

डॉ. रामस्वरूप वशिष्ठ



पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी प्रा. लि.

888, ईस्ट पार्क रोड, करौल बाग
नई दिल्ली-110005 (भारत)

राजा औषधि लेकर चल पड़ा। अब वह औषधि बाँटने लगा। औषधि के दो टुकड़े किये और एक टुकड़ा कौशल्या को पकड़ा दिया। दूसरा टुकड़ा उठाया ही था कि पीछे से एक आवाज गूंजी। यह गुरु वशिष्ठ की आवाज थी कि औषधि तीनों रानियों में बाँट दो। राजा ने दूसरे टुकड़े के दो भाग किये और एक टुकड़ा कैकेयी को दे दिया। फिर राजा ने बचे हुए टुकड़े के भी दो भाग कर डाले। ये टुकड़े भी रानी कौशल्या और रानी कैकेयी को ही पकड़ा दिये। दोनों रानियों ने अपने टुकड़ों को सुमित्रा को दे दिया। सुमित्रा ने दोनों टुकड़े मुस्कराते हुए खा लिये।

गोस्वामी तुलसीदास ने इस बँटवारे का वर्णन इस प्रकार किया है।

अर्ध भाग कौशल्यहि दीन्हा।<br>
उभय भाग आधे कर कीन्हा।<br>
कैकेयी कहँ नृप सो दयऊ।<br>
रह्यो सो उभय भाग पुनि भयऊ।।<br>
कौशल्या कैकई हाथ धरि।<br>
दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि।।

राजा ने आधा भाग कौशल्या को दिया। बचे हुए आधे भाग के दो बराबर भाग किये और एक टुकड़ा कैकेयी को दे दिया। बचे भाग के दो टुकड़े किये और एक-एक टुकड़ा कौशल्या और कैकेयी के हाथ पर रखकर सुमित्रा को दिलवा दिये।

यदि आप किसी के मन को पढ़ना चाहते हैं तो उसका व्यवहार ध्यान से देखिये। राजा दशरथ ने औषधि के दो भाग किये जबकि रानियाँ तीन थीं। इससे राजा का पक्षपात प्रगट होता है। फिर दूसरी रानी को देने के बाद जो टुकड़ा बचा था वह सुमित्रा को नहीं दिया, किन्तु उसके दो टुकड़े

करके कौशल्या और कैकेयी को दिया। सुमित्रा की फिर भी याद नहीं आई। इस व्यवहार से यह साफ पता चलता था कि राजा सुमित्रा से नाराज है।

यज्ञ के मौके पर ऋषि-मुनि, दरबारी और निमंत्रित मेहमान इकट्‌ठे हैं। सबके सामने सुमित्रा का अपमान हो रहा है, परन्तु सुमित्रा के चेहरे पर शिकन नहीं है। वह मुस्कराती हुई बातें कर रही है। हो सकता है कि उसके मन में हलचल मच रही हो। परन्तु पुत्र पाने की प्रबल इच्छा ने अपमान सहने को विवश कर दिया हो। चलिये, सुमित्रा से पूछ लिया जाय। बातचीत में सच्चाई सामने जरूर आयेगी।

जब सुमित्रा ने यह प्रश्न सुना कि दवा का बँटवारा कैसा रहा तो वह हँस पड़ी और बोली "राजा का स्वभाव ऐसा है कि वह अपनी भावनाओं को छिपा नहीं पाते। आदमी अपने स्वभाव को बदल नहीं सकता। उन्हें यह ख्याल भी नहीं आया होगा कि इतने सारे लोग उनके व्यवहार को देख रहे हैं। असल में हमारे राजा बहुत भोले हैं।"

हमने दूसरा प्रश्न यह दागा कि रानी की मुस्कराहट का राज क्या है ? उसका चेहरा म्लान क्यों नहीं है ? प्रश्न सुनकर रानी ने बताया कि "न तो मैं सम्मान से खुश होती हूँ और न अपमान से दुखी होती हूँ। मैं अपनी आपदाओं और कष्टों को अपनी परीक्षा की घड़ी समझती हूँ और उसे चुनौती के रूप में स्वीकार करती हूँ। कहते हैं भगवान अपने भक्तों की परीक्षा लिया करते हैं। हम इस संसार में सेवा करने आये हैं।"

हमारे मन में यह उत्सुकता उठी कि राजा इस कर्तव्य-परायण रानी से नाराज क्यों रहते हैं। इसलिये, सुमित्रा के आगे यह प्रश्न भी उछाल दिया। प्रश्न सुनकर

रानी मुस्कराई और बोली, "मेरी ही भूल के कारण राजा मुझसे नाराज रहते हैं। मेरा स्वभाव ऐसा है कि खरी बात मेरे मुँह से ज़बरदस्ती निकल पड़ती है। हमारे राजा को ठकुर-सुहाती बात सुनने की आदत है। इसमें उनका कुछ दोष भी नहीं है। खुशामदी लोगों से हर समय घिरे रहते हैं। लोग उनकी हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं। राजा को अपनी मर्जी के खिलाफ बात सुनने की आदत नहीं रही।"

रानी की बातों से हम अच्छी तरह समझ गये कि वह अपने कर्तव्य-कर्म को ईश्वर की सेवा समझ कर करती है। उसका मन सुख-दुख या मान-सम्मान से विचलित नहीं होता। धन्य है यह रानी। मन को वश में करने के लिये इसने पूरा जोर लगाया होगा। धन्य हैं ऐसे लोग जो मन को वश में रखने की कोशिश करते हैं।

समय का चक्र बड़ी तेजी से घूमता है। देखते ही देखते नौवाँ महीना आ गया। सावन के महीने में रानियों में शृंगी ऋषि की औषधि खाई थी। चैत्र शुक्ला नवमी को राजमहल में मंगल सूचक शहनाइयाँ बजने लगीं। स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं। सारे शहर को पता लग गया कि राजा दशरथ के पुत्र पैदा हुआ है। अधेड़ उम्र में राजा की मनोकामना पूरी हुई है। रानी कौशल्या के द्वार पर बधाई देने वालों का ताँता लग गया।

रानी कौशल्या का पुत्र साँवला-सलोना था। राजा दशरथ भी साँवले थे। रंग-रूप की समानता से लोग बच्चे को दशरथ का ही अवतार बता रहे थे। परन्तु स्वयं कौशल्या अपने पुत्र को भगवान का अवतार मान रही थी। गोस्वामी तुलसीदास ने रानी कौशल्या की मनोदशा का हूबहू चित्रण किया है। ध्यान से सुनिये।

बच्चे का स्वभाव कैसा है ? बदले में कुछ पाने की इच्छा न रखने वाला कृपालु स्वभाव पाया है जो दीनों पर दया करने में अद्वितीय है। बुद्धि कैसी है ? बात को समझने और सारांश ग्रहण करने में सिखाने वाले मुनियों का मन जीत लेगी। रंग-रूप कैसा है? स्वयं भगवान विष्णु का सा सुन्दर रूप है जिसको देख कर माँ बहुत प्रसन्न है। बल-पौरुष कैसा है? खर यानी दुष्ट लोगों का नाश करने वाला पराक्रम है। कौशल्या ने मन ही मन बच्चे को भगवान माना और उसे भगवान समझ कर ही पाला।

संत तुलसीदास ने कौशल्या के मन की बात सुनाकर हमें बच्चों के लालन-पालन की सबसे अच्छी तरकीब बता दी है। ईश्वर-कृपा से आपको संतान प्राप्त हो तो उसका लालन-पालन भगवान मान कर करें। पुत्र को भगवान विष्णु और कन्या को साक्षात् लक्ष्मी का अवतार समझ कर पालें। उसी प्रेम और उसी आदर भावना से व्यवहार करें जैसा आप मन्दिर में भगवान के साथ करते हैं। बच्चों को डाँटना-डपटना या एक की दूसरे से तुलना करना भगवान का अपमान है। प्रत्येक बच्चे में भगवान के अलग-अलग गुण प्रगट होते हैं। एक गुण की तुलना दूसरे गुण से न करें। याद रखिये बच्चे प्रेम से पलते हैं, धन-सम्पत्ति से नहीं।

कुछ समय बाद रानी कैकेयी पुत्रवती हुई। इस बच्चे का रंग रूप साँवला-सलोना था। सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और भगवान से प्रार्थना की कि बच्चा रानी की तरह निर्भीक, हठव्रती और धैर्यवान बने।

इसके बाद सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया। दोनों बच्चे सुमित्रा की तरह गोरे थे। राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। अधेड़ अवस्था में चार बेटों के बाप बन गये। यह श्रृंगी ऋषि की औषधि का चमत्कार था।

राजा औषधि लेकर चल पड़ा। अब वह औषधि बाँटने लगा। औषधि के दो टुकड़े किये और एक टुकड़ा कौशल्या को पकड़ा दिया। दूसरा टुकड़ा उठाया ही था कि पीछे से एक आवाज गूंजी। यह गुरु वशिष्ठ की आवाज थी कि औषधि तीनों रानियों में बाँट दो। राजा ने दूसरे टुकड़े के दो भाग किये और एक टुकड़ा कैकेयी को दे दिया। फिर राजा ने बचे हुए टुकड़े के भी दो भाग कर डाले। ये टुकड़े भी रानी कौशल्या और रानी कैकेयी को ही पकड़ा दिये। दोनों रानियों ने अपने टुकड़ों को सुमित्रा को दे दिया। सुमित्रा ने दोनों टुकड़े मुस्कराते हुए खा लिये।

गोस्वामी तुलसीदास ने इस बँटवारे का वर्णन इस प्रकार किया है।

अर्ध भाग कौशल्यहि दीन्हा।
उभय भाग आधे कर कीन्हा।
कैकेयी कहँ नृप सो दयऊ।
रह्यो सो उभय भाग पुनि भयऊ।।
कौशल्या कैकई हाथ धरि।
दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि।।

राजा ने आधा भाग कौशल्या को दिया। बचे हुए आधे भाग के दो बराबर भाग किये और एक टुकड़ा कैकेयी को दे दिया। बचे भाग के दो टुकड़े किये और एक-एक टुकड़ा कौशल्या और कैकेयी के हाथ पर रखकर सुमित्रा को दिलवा दिये।

यदि आप किसी के मन को पढ़ना चाहते हैं तो उसका व्यवहार ध्यान से देखिये। राजा दशरथ ने औषधि के दो भाग किये जबकि रानियाँ तीन थीं। इससे राजा का पक्षपात प्रगट होता है। फिर दूसरी रानी को देने के बाद जो टुकड़ा बचा था वह सुमित्रा को नहीं दिया, किन्तु उसके दो टुकड़े

करके कौशल्या और कैकेयी को दिया। सुमित्रा की फिर भी याद नहीं आई। इस व्यवहार से यह साफ पता चलता था कि राजा सुमित्रा से नाराज है।

यज्ञ के मौके पर ऋषि-मुनि, दरबारी और निमंत्रित मेहमान इकट्ठे हैं। सबके सामने सुमित्रा का अपमान हो रहा है, परन्तु सुमित्रा के चेहरे पर शिकन नहीं है। वह मुस्कराती हुई बातें कर रही है। हो सकता है कि उसके मन में हलचल मच रही हो। परन्तु पुत्र पाने की प्रबल इच्छा ने अपमान सहने को विवश कर दिया हो। चलिये, सुमित्रा से पूछ लिया जाय। बातचीत में सच्चाई सामने जरूर आयेगी।

जब सुमित्रा ने यह प्रश्न सुना कि दवा का बँटवारा कैसा रहा तो वह हँस पड़ी और बोली "राजा का स्वभाव ऐसा है कि वह अपनी भावनाओं को छिपा नहीं पाते। आदमी अपने स्वभाव को बदल नहीं सकता। उन्हें यह ख्याल भी नहीं आया होगा कि इतने सारे लोग उनके व्यवहार को देख रहे हैं। असल में हमारे राजा बहुत भोले हैं।"

हमने दूसरा प्रश्न यह दागा कि रानी की मुस्कराहट का राज क्या है ? उसका चेहरा म्लान क्यों नहीं है ? प्रश्न सुनकर रानी ने बताया कि "न तो मैं सम्मान से खुश होती हूँ और न अपमान से दुखी होती हूँ। मैं अपनी आपदाओं और कष्टों को अपनी परीक्षा की घड़ी समझती हूँ और उसे चुनौती के रूप में स्वीकार करती हूँ। कहते हैं भगवान अपने भक्तों की परीक्षा लिया करते हैं। हम इस संसार में सेवा करने आये हैं।"

हमारे मन में यह उत्सुकता उठी कि राजा इस कर्तव्य-परायण रानी से नाराज क्यों रहते हैं। इसलिये, सुमित्रा के आगे यह प्रश्न भी उछाल दिया। प्रश्न सुनकर

# कथाक्रम

# 1

# पुत्र-प्राप्ति की चमत्कारी औषधि

आइए, आपको अवध देश की राजधानी अयोध्या ले चलें। गुरु वशिष्ठ ने बुलावा भेजा है। उनके बुलावे पर भारत के प्रसिद्ध डॉक्टर श्रृंगी मुनि आ रहे हैं। वे पुत्रेष्टि यज्ञ करेंगे। पुत्रेष्टि यज्ञ में पुत्र पैदा करने की अचूक औषधि बनाई जाती है। अवध देश के राजा के कोई संतान नहीं है। वह ही यज्ञ करवा रहे हैं। यज्ञ के बाद बढ़िया दावत मिलेगी। दावत में मखाने की खीर और घी में तले हुए मालपुए परोसे जायेंगे। आनंद आ जायेगा। सावन का महीना चल रहा है। लोग कहते हैं कि "सावन न खाई खीर न भादो पूआ। अरे जनम तू यों ही हुआ।" जल्दी करो।

उधर देखो, श्रृंगी मुनि ने यज्ञ शुरू कर दिया है। आग के ऊपर कढ़ाई रख दी है। कढ़ाई में दूध मखाने और चीनी डाल दी है। अब मुनि अपनी झोली टटोल रहे हैं। झोली में से कुछ जड़ी-बूटियाँ निकालीं। लो, वे भी कढ़ाई में डाल दीं। औषधि तैयार हो गई। ऋषि ने औषधि राजा के हाथ में रख दी और बता दिया कि अपनी रानियों को बांट दो। भगवान की कृपा से आपकी मनोकामना पूरी होगी।

राजा की तीन रानियाँ हैं। तीनों एक कतार में खड़ी हैं। सबसे पहले कौशल्या खड़ी है। उसके बाद छोटी रानी कैकेयी है। अन्त में मँझली रानी सुमित्रा है। सुमित्रा मंझली रानी है, फिर वह सबसे पीछे क्यों है ? ऐसा मालूम पड़ता है कि राजा ने उन्हें इसी ढंग से खड़ा किया है।

राजा औषधि लेकर चल पड़ा। अब वह औषधि बाँटने लगा। औषधि के दो टुकड़े किये और एक टुकड़ा कौशल्या को पकड़ा दिया। दूसरा टुकड़ा उठाया ही था कि पीछे से एक आवाज गूंजी। यह गुरु वशिष्ठ की आवाज थी कि औषधि तीनों रानियों में बाँट दो। राजा ने दूसरे टुकड़े के दो भाग किये और एक टुकड़ा कैकेयी को दे दिया। फिर राजा ने बचे हुए टुकड़े के भी दो भाग कर डाले। ये टुकड़े भी रानी कौशल्या और रानी कैकेयी को ही पकड़ा दिये। दोनों रानियों ने अपने टुकड़ों को सुमित्रा को दे दिया। सुमित्रा ने दोनों टुकड़े मुस्कराते हुए खा लिये।

गोस्वामी तुलसीदास ने इस बँटवारे का वर्णन इस प्रकार किया है।

अर्ध भाग कौशल्यहि दीन्हा।
उभय भाग आधे कर कीन्हा।
कैकेयी कहँ नृप सो दयऊ।
रह्यो सो उभय भाग पुनि भयऊ।।
कौशल्या कैकई हाथ धरि।
दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि।।

राजा ने आधा भाग कौशल्या को दिया। बचे हुए आधे भाग के दो बराबर भाग किये और एक टुकड़ा कैकेयी को दे दिया। बचे भाग के दो टुकड़े किये और एक-एक टुकड़ा कौशल्या और कैकेयी के हाथ पर रखकर सुमित्रा को दिलवा दिये।

यदि आप किसी के मन को पढ़ना चाहते हैं तो उसका व्यवहार ध्यान से देखिये। राजा दशरथ ने औषधि के दो भाग किये जबकि रानियाँ तीन थीं। इससे राजा का पक्षपात प्रगट होता है। फिर दूसरी रानी को देने के बाद जो टुकड़ा बचा था वह सुमित्रा को नहीं दिया, किन्तु उसके दो टुकड़े

करके कौशल्या और कैकेयी को दिया। सुमित्रा की फिर भी याद नहीं आई। इस व्यवहार से यह साफ पता चलता था कि राजा सुमित्रा से नाराज है।

यज्ञ के मौके पर ऋषि-मुनि, दरबारी और निमंत्रित मेहमान इकट्ठे हैं। सबके सामने सुमित्रा का अपमान हो रहा है, परन्तु सुमित्रा के चेहरे पर शिकन नहीं है। वह मुस्कराती हुई बातें कर रही है। हो सकता है कि उसके मन में हलचल मच रही हो। परन्तु पुत्र पाने की प्रबल इच्छा ने अपमान सहने को विवश कर दिया हो। चलिये, सुमित्रा से पूछ लिया जाय। बातचीत में सच्चाई सामने जरूर आयेगी।

जब सुमित्रा ने यह प्रश्न सुना कि दवा का बँटवारा कैसा रहा तो वह हँस पड़ी और बोली "राजा का स्वभाव ऐसा है कि वह अपनी भावनाओं को छिपा नहीं पाते। आदमी अपने स्वभाव को बदल नहीं सकता। उन्हें यह ख्याल भी नहीं आया होगा कि इतने सारे लोग उनके व्यवहार को देख रहे हैं। असल में हमारे राजा बहुत भोले हैं।"

हमने दूसरा प्रश्न यह दागा कि रानी की मुस्कराहट का राज क्या है ? उसका चेहरा म्लान क्यों नहीं है ? प्रश्न सुनकर रानी ने बताया कि "न तो मैं सम्मान से खुश होती हूँ और न अपमान से दुखी होती हूँ। मैं अपनी आपदाओं और कष्टों को अपनी परीक्षा की घड़ी समझती हूँ और उसे चुनौती के रूप में स्वीकार करती हूँ। कहते हैं भगवान अपने भक्तों की परीक्षा लिया करते हैं। हम इस संसार में सेवा करने आये हैं।"

हमारे मन में यह उत्सुकता उठी कि राजा इस कर्तव्य-परायण रानी से नाराज क्यों रहते हैं। इसलिये, सुमित्रा के आगे यह प्रश्न भी उछाल दिया। प्रश्न सुनकर

रानी मुस्कराई और बोली, "मेरी ही भूल के कारण राजा मुझसे नाराज रहते हैं। मेरा स्वभाव ऐसा है कि खरी बात मेरे मुँह से ज़बरदस्ती निकल पड़ती है। हमारे राजा को ठकुर-सुहाती बात सुनने की आदत है। इसमें उनका कुछ दोष भी नहीं है। खुशामदी लोगों से हर समय घिरे रहते हैं। लोग उनकी हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं। राजा को अपनी मर्जी के खिलाफ बात सुनने की आदत नहीं रही।"

रानी की बातों से हम अच्छी तरह समझ गये कि वह अपने कर्तव्य-कर्म को ईश्वर की सेवा समझ कर करती है। उसका मन सुख-दुख या मान-सम्मान से विचलित नहीं होता। धन्य है यह रानी। मन को वश में करने के लिये इसने पूरा जोर लगाया होगा। धन्य हैं ऐसे लोग जो मन को वश में रखने की कोशिश करते हैं।

समय का चक्र बड़ी तेजी से घूमता है। देखते ही देखते नौवाँ महीना आ गया। सावन के महीने में रानियों में श्रृंगी ऋषि की औषधि खाई थी। चैत्र शुक्ला नवमी को राजमहल में मंगल सूचक शहनाइयाँ बजने लगीं। स्त्रियाँ मंगल गीत गाने लगीं। सारे शहर को पता लग गया कि राजा दशरथ के पुत्र पैदा हुआ है। अधेड़ उम्र में राजा की मनोकामना पूरी हुई है। रानी कौशल्या के द्वार पर बधाई देने वालों का ताँता लग गया।

रानी कौशल्या का पुत्र साँवला-सलोना था। राजा दशरथ भी साँवले थे। रंग-रूप की समानता से लोग बच्चे को दशरथ का ही अवतार बता रहे थे। परन्तु स्वयं कौशल्या अपने पुत्र को भगवान का अवतार मान रही थी। गोस्वामी तुलसीदास ने रानी कौशल्या की मनोदशा का हूबहू चित्रण किया है। ध्यान से सुनिये।

बच्चे का स्वभाव कैसा है ? बदले में कुछ पाने की इच्छा न रखने वाला कृपालु स्वभाव पाया है जो दीनों पर दया करने में अद्वितीय है। बुद्धि कैसी है ? बात को समझने और सारांश ग्रहण करने में सिखाने वाले मुनियों का मन जीत लेगी। रंग-रूप कैसा है? स्वयं भगवान विष्णु का सा सुन्दर रूप है जिसको देख कर माँ बहुत प्रसन्न है। बल-पौरुष कैसा है? खर यानी दुष्ट लोगों का नाश करने वाला पराक्रम है। कौशल्या ने मन ही मन बच्चे को भगवान माना और उसे भगवान समझ कर ही पाला।

संत तुलसीदास ने कौशल्या के मन की बात सुनाकर हमें बच्चों के लालन-पालन की सबसे अच्छी तरकीब बता दी है। ईश्वर-कृपा से आपको संतान प्राप्त हो तो उसका लालन-पालन भगवान मान कर करें। पुत्र को भगवान विष्णु और कन्या को साक्षात् लक्ष्मी का अवतार समझ कर पालें। उसी प्रेम और उसी आदर भावना से व्यवहार करें जैसा आप मन्दिर में भगवान के साथ करते हैं। बच्चों को डाँटना-डपटना या एक की दूसरे से तुलना करना भगवान का अपमान है। प्रत्येक बच्चे में भगवान के अलग-अलग गुण प्रगट होते हैं। एक गुण की तुलना दूसरे गुण से न करें। याद रखिये बच्चे प्रेम से पलते हैं, धन-सम्पत्ति से नहीं।

कुछ समय बाद रानी कैकेयी पुत्रवती हुई। इस बच्चे का रंग रूप साँवला-सलोना था। सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और भगवान से प्रार्थना की कि बच्चा रानी की तरह निर्भीक, हठव्रती और धैर्यवान बने।

इसके बाद सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया। दोनों बच्चे सुमित्रा की तरह गोरे थे। राजा की खुशी का ठिकाना न रहा। अधेड़ अवस्था में चार बेटों के बाप बन गये। यह श्रृंगी ऋषि की औषधि का चमत्कार था।

राजा की खुशी में प्रजा भी प्रसन्न थी। सारा अयोध्या शहर दुल्हन की तरह सज गया। खुशी के माहौल में समय बीतता रहा। कुछ दिन बाद नामकरण का समय आ गया। राजा ने अपने कुल-गुरु मुनि वशिष्ठ को बुलवाया। मुनि ने अपना पोथी-पत्रा निकाला और ग्रहों की गणना करके कौशल्या के पुत्र का नाम राम रख दिया। कैकेयी के पुत्र का नाम भरत रखा और सुमित्रा के पुत्रों का नाम लक्ष्मण और शत्रुघ्न रखे गये।

नामकरण के मौके पर एक प्रथा भी हुआ करती थी। बच्चे के सामने हथियार, किताब और घरेलू चीजें रख दी जाती थीं और बच्चे से किसी चीज़ को छूने को कहा जाता था। राजा दशरथ ने अपने पुत्रों के सामने तरह-तरह के हथियार डाल दिये। परन्तु पुस्तकें आदि कोई चीज़ नहीं डाली। राजा का विचार था कि राजपुत्रों को हथियार ही छूने चाहिये।

राम ने एक धनुष को छू लिया। लोगों ने अनुमान लगाया कि राम महान योद्धा बनेगा और उसका स्वभाव धनुष की तरह लचीला होगा। लक्ष्मण ने वाण छुआ। लोगों ने बताया कि लक्ष्मण वाण की तरह दूसरों की सेवा करेगा। भरत ने गदा को छुआ तो कहा गया कि वह रक्षा करने वाला बनेगा। सबसे छोटे भाई ने तलवार छू ली। उसके बारे में सोचा गया कि वह सिपहसालार बनेगा। लोगों के अनुमान सही सिद्ध हुए।

# 2

# राजकुमारों का लालन-पालन

रानी कौशल्या ने अपने पुत्र को भगवान का अवतार मान लिया था। अतः वह राम का पालन-पोषण भगवान की तरह कर रही थी। वह शील स्वभाव की दयालु स्त्री थी। बड़े से बड़े कसूर पर भी, दासी को भी नहीं डाँटती थी। इसलिये, सब लोग राम को बहुत आदर से रखते थे। छोटी रानी कैकेयी बहुत बुद्धिमती थी। उसने अच्छी शिक्षा भी पायी थी। उसकी देख-रेख में बच्चे का पालन सही ढंग से हो रहा था। परन्तु रानी सुमित्रा के स्वभाव में थोड़ा अक्खड़पन था। राजा को भी सत्य बात कहने से नहीं चूकती थी। सत्यवादी कुछ कठोर हो जाता है। क्या वह अपने बच्चों के साथ भी कठोरता बरत रही थी ? कठोरता से बच्चे का सही विकास नहीं हो पाता। बच्चा या तो दब्बू बन जाता है या विद्रोही हो जाता है। रानी के महल में जाकर देखने से ही ठीक पता चलेगा। आइये, आज रानी के लालन-पालन का ढंग देख लें।

यह रानी सुमित्रा का महल है। चलो, अंदर झाँकें। सामने बरामदे पर दो पिंजड़े रखे हैं। भीतर बैठे तोते टें-टें का कर्कश स्वर निकाल रहे हैं। अरे, ये बच्चे क्या कर रहे हैं ? ओ हो, तोतों के पानी पीने के बर्तनों को धो रहे हैं। अब साफ पानी भर कर भीतर रख रहे हैं।

लीजिये, रानी सुमित्रा भीतर से निकल कर बच्चों के पास आ गई। वह बच्चों को अनार के दाने पकड़ा रही है। बच्चों ने दाने एक बर्तन में डाल दिये और अपने-अपने

पिंजड़ों में रख रहे हैं। सुमित्रा बच्चों की पीठ थपथपा कर उन्हें शाबाशी दे रही है। बच्चों ने अपने-अपने पिंजड़े उठा लिये। सुमित्रा उन्हें ऊँचे टाँगने लगी। बच्चे खुश होकर नाच रहे हैं।

वह देखो, दो पिल्ले कूं-कू कर रहे हैं। शायद खाना माँग रहे हैं। रानी भीतर गई और थाली ले आई है। थाली में दूध में भीगे हुए रोटी के टुकड़े हैं। रानी एक-एक टुकड़ा बच्चों को पकड़ा रही है और बच्चे अपने पिल्ले को खिला रहे हैं। बच्चे खुश होकर हँस रहे हैं और बार-बार माँ की साड़ी का पल्लू खींच कर उसका ध्यान खींचते हैं ताकि माँ उसकी बात सुने।

अब रानी बच्चों को साथ लेकर चली और आँगन में आ गई। अब बच्चों से दो बर्तनों में पानी डलवा रही है। पानी भरे बर्तन थोड़ी ऊँचाई पर रख दिये। फिर उनसे अनाज के दाने फिकवायें। लीजिये, चिड़ियाँ और कबूतर आ-आकर दानों के पास बैठ गये और मजे से दाने चुगने लगे। बच्चे ताली पीट कर हँस रहे हैं। रानी भी मन ही मन मगन है।

अब गमलों में पानी डालने की बारी आई है। बच्चे कूदते-उछलते पानी लाते हैं और गमलों में डालते हैं। धन्य हो रानी सुमित्रा। अपने बच्चों को पशु-पक्षियों और पेड़-पौधों से जोड़ रही है। ये बच्चे अवश्य ही सच्चे कर्मवीर बनेंगे। यदि सभी मातायें ऐसी चरित्र-शिक्षा देने लगें तो देश में स्वर्ग उतर आयेगा। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

अब माँ-बेटे नाश्ता करने बैठे। नाश्ते के बाद कुछ देर आराम किया। इसके बाद तीनों एक मेज के पास बैठ गये। रानी ने खिलौनों के तीन टोकरे अपने पास रख लिए। पहले एक टोकरा उठाया और खिलौने मेज पर डाल दिये। बच्चों

को कुछ समझाया। अब लक्ष्मण लाल रंग के घोड़े चुन-चुन कर अपनी गोद में रख रहा है और शत्रुघ्न काले रंग के हाथी इकट्ठे कर रहा है। शायद यह रंगों की पहचान करने की कवायद मालूम पड़ती है। अब पहला टोकरा समेट लिया और दूसरे टोकरे के खिलौने बाहर निकाले। ये खिलौने गोल, चौकोर और त्रिभुज जैसी आकृतियों के हैं। बच्चे इन आकृतियों में से खिलौने निकाल कर एक सी आकृति वाली तीन ढेरियाँ बनाने लगे। पूरे ढेर लग गये तो इनकी जगह पर तीसरा टोकरा उलट दिया। इस ढेर में आकृतियाँ दो तरह की ही हैं किन्तु इनके आकार छोटे से बड़े होते चले गये हैं। अब बच्चे अपनी-अपनी आकृति छाँटकर निकाल रहे हैं और उन्हें आकार के क्रम से सजा रहे हैं। पहले छोटा, फिर उससे बड़ा और आगे और भी बड़ा खिलौना सजाया जा रहा है। यह मानसिक शिक्षा है जिससे बच्चों की बुद्धि का विकास होगा। चरित्र-शिक्षा के बाद मानसिक शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान खेल ही खेल में हो रहा है। ऐसी माँ को शतशः प्रणाम।

शाम को रानी सुमित्रा अपने बच्चों को लेकर बगीचे में गई। वहाँ पर रानी कौशल्या और रानी कैकेयी भी अपने बच्चों के साथ मौजूद थीं। तीनों रानियाँ आपस में प्रेमपूर्वक मिलीं। फिर उन्होंने अपने बच्चों को अपनी सौतेली माताओं और भाइयों से मिलवाया। यह शिष्टाचार की शिक्षा थी जिसमें बच्चों ने बड़ों और छोटों के साथ व्यवहार करने की शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद रानियाँ आपस में बातें करने लगीं और बच्चे बगीचे में घूमने-फिरने लगे। बच्चों ने इधर-उधर दौड़कर, पेड़ों से झूल कर और कुछ फूल और पत्ते तोड़ कर खूब आनंद उठाया। इसके बाद सब रानियाँ अपने-अपने महल को चली गईं दिन भर परिश्रम के बाद मनोरंजन का प्रोग्राम बहुत भला लगता है।

बच्चे जब तीन वर्ष से अधिक आयु के हो गये तो वे अकेले ही एक महल से दूसरे महले में आने-जाने लगे। अब चारो भाई आपस में मिलजुल कर खेलने लगे। खेलकूद में चोट लगती ही रहती है। एक दिन लक्ष्मण के पैर में मोच आ गई। लक्ष्मण दर्द से रोने लगा। तब राम ने उसे पीठ पर लादा और अपने कमरे में लिटा दिया। उड़द की दाल पीस कर रोटी बनाई और तेल से चुपड़ कर लक्ष्मण के पैर पर बाँध दी। फिर दूध में एक चुटकी हल्दी डालकर गरम-गरम दूध उसे पिला दिया। हल्दी ऐसी दवा है जो खून को जमने से रोकती है। गरम सेंक से लक्ष्मण को चैन मिला तो उसे नींद आ गई। भरत ने देखा कि लक्ष्मण सो गया है तो वह शत्रुघ्न को साथ लेकर अपने महल में चला गया। दोनों ने नाश्ता किया और फिर खेलते-कूदते रहे। इस घटना ने राम-लक्ष्मण और भरत-शत्रुघ्न की दो जोड़ियाँ बना दीं।

अब खेल-कूद में राम और लक्ष्मण एक तरफ हो जाते और भरत के साथ शत्रुघ्न मिल जाता। बालपन की यह दोस्ती इतनी मजबूत हो गई कि जीवन भर कायम रही। गोस्वामी तुलसीदास ने भी इसकी पुष्टि रामचरितमानस में की है।

बारेहि ते निज हित पति जानी।
लछिमन राम चरन रति मानी॥
भरत शत्रुघ्न दूनहु भाई।
प्रभु-सेवक जसि प्रीति बड़ाई॥

बचपन से ही लक्ष्मण ने राम को अपना हितैषी माना और उनसे प्रेम करने लगा। भरत और शत्रुघ्न भी दोनों एक दूसरे से प्रेम करते थे। उनमें स्वामी-सेवक जैसा प्रेम था। भारतीय संस्कृति में छोटा भाई अपने बड़े भाई के चरण छूता है और उसे पूज्य मानता है।

# 3

# गुरुकुल में संस्कार-संपन्नता

गुरु-गृहँ गए पढ़न रघुराई।
अलप काल विद्या सब आई।।

अपने भाइयों के साथ राम गुरु के घर पढ़ने गये और थोड़े समय में ही सब विधाओं में पारंगत हो गये। अल्पकाल में ही विद्वान बनने की क्या तरकीब है ? अगर यह रहस्य जानना है तो गुरु वशिष्ठ के घर चलो। गुरु चारों भाइयों को कुछ समझा रहे हैं।

गुरु : "बेटा जीवन में कर्म प्रधान है। तुम्हे कर्म ही सच्ची शिक्षा देगा। तुम कर्म को सेवा मानो। कर्म से जीवन के पुरुषार्थ कर सकोगे। कर्म करने के बाद उसका विचार मंथन होगा। वह तुम्हारी साधना होगी। इस तपस्या से गूढ़ ज्ञान प्राप्त होगा। जो मन में समा जायेगा।"

कर्म ही शिक्षक हमारा ज्ञान को चमका सकेगा।
किस तरह जीवन चलायें कर्म ही समझा सकेगा।।
कर्म पर चिंतन करो तो कर्म ही विज्ञान बनता।
कामनायें पूर्ण करता कर्म सच्चा धर्म बनता।।

लक्ष्मण : "गुरुवर, आपका आशय यह है कि पहले हम कर्म से ज्ञान सीखें। ठीक है, आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। आप ही समझायें कि हम लोग कौन सा कर्म करें।"

गुरु : "मैं अपनी नंदिनी गाय आप लोगों को सौंपता हूँ। इसको जंगल में चराना, दिनभर के लिये चारा

काटना, वन्य पशुओं से बचाना और साफ-सुथरी रखना एक काम है। गाय को दुहना, दूध गर्म करना लोगों को पिलाना और गोबर-मूत्र की सफाई रखना दूसरा काम है। इन कार्यों की जिम्मेदारी कैसे निभेगी, यह खुद सोच लो।"

राम-लक्ष्मण ने पहला कार्य संभाल लिया। गाय के चारे का प्रबंध राम ने संभाल लिया और गाय की रक्षा और उसकी शारीरिक सफ़ाई लक्ष्मण के जिम्मे हुई। दूसरा काम भरत और शत्रुघ्न की जिम्मेदारी हुई। भरत को दूध दुहने और बाँटने का कार्य मिला और शत्रुघ्न ने गोबर और गोमूत्र की सफाई का जिम्मा उठाया।

दोपहर के भोजन के बाद दो घंटे विचार-मंथन के लिये नियत कर दिये थे। इसका नाम 'साधना सत्र' था। साधना-सत्र के समय चारों राजकुमार गुरु के पास आये। गुरु ने एक प्रश्न उछाला—"मैंने आप लोगों को दो कार्य बताये थे। उन दोनों में क्या भिन्नता है और क्या समानता है ? एक टोली भिन्नता ढूँढे और दूसरी समानता का पता लगाये।"

जब राजकुमार कुछ उत्तर न दे सके तो गुरु ने संकेतात्मक प्रश्न किये।

(1) "राम और लक्ष्मण के कार्य से गाय को क्या लाभ या हानि है?" (यह गाय का पोषण है और कार्यकर्ता का उदार दृष्टिकोण प्रगट करता है)।

(2) "भरत और शत्रुघ्न के कार्य से गाय को क्या लाभ या हानि है ? (इससे गाय का शोषण होता है और मनुष्य का स्वार्थपूर्ण दृष्टिकोण प्रकट करता है)।

समानता के लिये संकेत— (3) "राम-लक्ष्मण के कार्य से भरत-शत्रुघ्न को क्या लाभ है ?" और "भरत शत्रुघ्न के कार्य से राम-लक्ष्मण को क्या लाभ है ?"

दोनों प्रश्नों का एक ही उत्तर आता है— दूध की प्राप्ति अर्थात् दोनों का लक्ष्य एक ही होता है।

सत्र की समाप्ति पर गुरु ने समझाया कि एक ही लक्ष्य की प्राप्ति के लिये अलग-अलग कार्य करने को सहयोग कहते हैं। सहयोग के लिये कार्यकर्ताओं की सहमति होना जरूरी है।

फिर अगले साधना सत्र में 'संसार में सहयोग' पर चर्चा चली। इस चर्चा द्वारा परिवार में सहयोग, मुहल्ले में सहयोग, देश में सहयोग, संसार में सहयोग, पशु-पक्षियों में सहयोग, प्राकृतिक परिस्थिति में सहयोग, नक्षत्र मंडल में सहयोग पर विचार-विमर्श हुआ। अंत में सहयोग को वैश्विक नियम के रूप में स्वीकार किया गया।

सहयोग के बाद असहयोग की बारी आई। असहयोग का बीजारोपण असहमति से हुआ। असहमति के उत्तरोत्तर बढ़ते रहने से हुज्जत, विवाद, झगड़ा, शत्रुता, युद्ध और संग्राम तक विचार-मंथन हुआ। अंत में युद्ध में विजय प्राप्त करना मुख्य क्यों है, इस प्रश्न पर वाद-विवाद कराया गया और सहयोग की चर्चा समाप्त हुई।

राजकुमारों की शिक्षा के दौरान गुरु वशिष्ठ ने उनके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके वीरोचित गुणों को परखा। यों तो चारों भाई साहसी, धैर्यवान और परिश्रमी थे, किन्तु राम और लक्ष्मण के साहस और दृढ़ता की प्रतिदिन परीक्षा हो रही थी। वन में बहुत से हिंसक पशु हैं। उनसे निबटना और गाय के लिये दिन भर का चारा

इकट्ठा करना उनकी कष्ट-सहिष्णुता का प्रबल सबूत है। दोनों भाई श्रेष्ठ बनने के योग्य हैं।

चारिउ सील रूप गुन धामा।
तदपि अधिक सुखसागर रामा॥

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि राम और लक्ष्मण एक दूसरे के परिपूरक हैं। राम संकोची हैं। प्रतिद्वंद्वी के साथ भी नम्रता से बात करते हैं। परन्तु लक्ष्मण में अक्खड़पन है। खरी बात निर्भयतापूर्वक कहने की आदत है। राम का स्वभाव बहुत कोमल है। दूसरों का दुख देखते ही दया आ जाती है। परन्तु लक्ष्मण ने कठोर से कठोर कष्ट में भी विचलित होना सीखा ही नहीं। राम चतुराई में अद्वितीय हैं तो लक्ष्मण में लम्बी अवधि तक घोर परिश्रम करने की क्षमता अपूर्व है। राम में प्रेम का सागर भरा है। लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने की अद्‌भुत क्षमता है। लक्ष्मण लोगों से काम लेने में चतुर हैं। एक के बिना दूसरा अधूरा है।

चारों भाइयों के गुणों पर विचार करते-करते मुनि वशिष्ठ के दिमाग में एक नया विचार कौंधा। राम और लक्ष्मण की जोड़ी ने किशोर अवस्था में ही हिंसक पशुओं से गाय की रक्षा की है। क्या युवा होने पर यह जोड़ी निशाचरों से ऋषियों की रक्षा कर सकेगी ? ऋषि लोग सदाचार की शिक्षा देते हैं। असुरों को सदाचार से चिढ़ है। उन्हें छल-प्रपंच से सुख प्राप्त करना ही रुचता है। हमारे देश के राजा निशाचरों से भयभीत रहते हैं क्योंकि असुरों का मुखिया लंकेश रावण है। रावण के डर से राजा लोग ऋषियों की रक्षा नहीं कर पाते। इस समय असुर लोग मुनि विश्वामित्र का यज्ञ विध्वंस कर रहे हैं। इन असुरों का नाश करना ही पड़ेगा। शायद राम और लक्ष्मण इस योग्य हैं।

सोचते-सोचते गुरु वशिष्ठ को ध्यान आया कि राम और लक्ष्मण को युद्ध कला और रणनीति की उच्च शिक्षा मिलनी चाहिये। केवल मुनि विश्वामित्र ही ऐसी शिक्षा दे सकते हैं। राम और लक्ष्मण को उन्हीं के पास भेजना होगा। संभव है राजा दशरथ आनाकानी करें। क्योंकि वह पुत्र-मोह में बहुत फँसे हैं। खैर, उनको समझा लेंगे। परन्तु राम लक्ष्मण के विचार जानने चाहिये।

सबसे पहले मुनि वशिष्ठ ने अपनी मानसिक विचारधारा को एक योजना के प्रारूप में ढाला और उसे लेखबद्ध किया। इस प्रारूप को अच्छी तरह सीलबंद करके अपने अत्यन्त विश्वस्त व्यक्ति को सौंप दिया। उसे समझा दिया कि वह लिफाफा मुनि विश्वामित्र को ही देना है, किसी दूसरे को इसकी भनक भी नहीं लगनी चाहिए।

दूत को विदा करने के बाद मुनि वशिष्ठ ने चारों राजकुमारों को बुलवाया। मुनि राजकुमारों के मन को गहराई से टटोलना चाहते थे ताकि जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण को समझ सकें। क्या राजकुमार धनुर्विद्या सीखने के इच्छुक हैं ? क्या वे निशाचरों से टकराने को राजी हैं ? क्या वे अपने माता-पिता की जुदाई सहन कर सकते हैं ?

गुरु की आज्ञा पाकर चारों राजकुमार गुरु के पास पहुँचे। गुरु ने उनसे यही पूछा कि घर जाकर प्रत्येक राजकुमार कौन-सा कार्य करना चाहेगा। सबसे पहले राम ने उत्तर दिया, "गुरुवर, मैंने शिक्षा का आरंभ नंदिनी के लिये चारा जुटाने से किया था। यही कार्य मेरे जीवन का लक्ष्य बन गया है। मैंने गरीबी को और अभाव को मिटाने का व्रत लिया है। कोई भूखा-नंगा न रहे और किसी को आधि-व्याधि सताने न पाये, यही कार्य मेरे जीवन का प्रधान उद्देश्य होगा।"

राम के चतुरतापूर्ण उत्तर ने सब भाइयों को अच्छा संकेत-सूत्र दे दिया। उसी सूत्र को पकड़ कर लक्ष्मण ने वैसा ही उत्तर दिया। वह बोला, "मैंने नंदिनी की रक्षा उसके बाहरी और भीतरी शत्रुओं से की है। हिंसक पशु गाय के बाहरी दुश्मन हैं। अस्त्र-शस्त्रों से गाय की रक्षा करता रहा। गाय की खाल पर चिपके हुए खून पीने वाले जौंक कलीलियां उसके भीतरी शत्रु हैं। उनको हटाकर गाय को सुख पहुँचाता रहा। घर जाकर भीतरी और बाहरी शत्रुओं से प्रजा की रक्षा करने के लिये मैं अपना जीवन समर्पित कर चुका हूँ। आप मुझे आशीर्वाद दीजिये। ताकि मैं अपने ध्येय में सफल मनोरथ हो सकूँ।"

लक्ष्मण के उत्तर से मुनि बहुत प्रसन्न हुए। वह उठकर खड़े हो गये और आशीर्वाद देने की मुद्रा बनाकर बोले—"बेटा लक्ष्मण, तुम्हारे उत्तर से मुझे बेहद खुशी हुई है। भगवान करे, सफलता सदा तुम्हारे चरण चूमती रहे। आज देश को तुम्हारे-जैसे साहसी युवकों की जरूरत है। निशाचर हमारे द्वार पर दस्तक दे रहे हैं। परन्तु अभी तुम्हें युद्ध के कौशल नहीं आते। बाहर रहकर रण कला की ट्रेनिंग लेनी पड़ेगी। ट्रेनिंग में घोर परिश्रम करना पड़ता है। ट्रेनिंग के बाद अपनी फौज को भी नये कौशल सिखाने होंगे। यह कार्य भी घोर श्रम की माँग करेगा। हो सकता है निशाचर हम पर चढ़ आयें। तब युद्ध करना होगा। क्या तुम घोर तपस्या का जीवन बिताने को तैयार हो ? क्या तुम माता-पिता से दूर रह पाओगे ? अच्छी तरह सोच लो और सबसे सलाह कर लो। मैं तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा करूँगा।

गुरु के प्रेम और आशीर्वाद को पाकर लक्ष्मण का चेहरा खिल उठा। गुरु ने उससे परिश्रम की और ममत्व-त्याग की माँग की थी। अतः वह उठकर खड़ा हो

गया और बोला, "आदरणीय गुरुजी, आपने कृपा करके मेरे कार्य की गुरुता मुझे समझाई और उसके लिये उठाये जाने वाले कठोर श्रम और कष्टों का पूरा ब्यौरा मुझे सुना दिया। मैं धन्य हुआ। फिर आपने मेरे ममत्व की जाँच की और परिवार के लोगों से सलाह करने का समय दिया। इस संबंध में मेरा निवेदन यह है कि युद्धकला की ट्रेनिंग मुझे लेनी है, किसी दूसरे परिजन को नहीं लेनी। श्रम भी मुझे ही करना है और कष्ट भी मैं ही भोगूँगा। दूसरा व्यक्ति मेरी क्षमता को कैसे समझ सकता है ? मैं अपनी क्षमता को जानता हूँ और मैं ही जिम्मेदारी ले सकता हूँ। मेरी माँ ने मुझे बचपन से परिश्रम करना और कष्ट सहना सिखाया है। आज मैं आपके सामने प्रतिज्ञा करता हूँ कि जहाँ कहीं आप ट्रेनिंग के लिये मुझे भेजेंगे, वहाँ खुशी से जाऊँगा और सारे कष्ट सहर्ष झेलूँगा। मैं सेवा से मुँह नहीं मोडूँगा। आप मुझे आशीर्वाद दीजिये ताकि मैं आपकी आशा के अनुरूप बन सकूँ।"

लक्ष्मण की दृढ़ता और साहस देखकर मुनि की आँखें चमक उठीं। खुशी में आकर लक्ष्मण को छाती से चिपका लिया और रुँधे हुए कंठ से बोले, "बेटा, तुमने मुझे महिमा-मंडित कर दिया। मेरी छाती गर्व से फूल गई है। तुमने मुझे भरपूर दक्षिणा चुका दी। तुम गुरु ऋण से उऋण हुए। मैं जल्दी ही तुम्हारी ट्रेनिंग की व्यवस्था करूँगा। तब तक तुम आराम करो।"

ज्योहीं मुनि ने राम की तरफ देखा, राम को खड़े हुए पाया। राम ने कहा, "गुरुदेव, मैं भी लक्ष्मण के साथ युद्धकला सीखना चाहता हूँ। मुझे भी ट्रेनिंग लेने की आज्ञा दीजिये। मैं भी सभी तरह के कष्ट झेलने को तैयार हूँ। राम लक्ष्मण की जोड़ी को अलग मत कीजिये।"

मुनि असल में यही चाहते थे कि राम और लक्ष्मण दोनों ही युद्ध कला में पूर्ण पारंगत हो जायें। राम का पौरुष, राम की कुशाग्र बुद्धि और दूसरों को अपनी ओर खींच लाने वाला अत्यन्त आकर्षक व्यक्तित्व अद्वितीय था। लक्ष्मण में अदम्य साहस, अद्भुत वीरता है और कष्ट सहने की महान शक्ति है। परन्तु धीरज की कमी है। युद्धकाल में क्रोध तात्कालिक लाभ जरूर देता है। क्योंकि शरीर की ऊर्जा को इकट्ठी करके क्रोधी का बल बढ़ा देता है किन्तु बाद में शरीर ऊर्जा की कमी महसूस करता है और क्रोधी निढाल हो जाता है। इसलिये राम को ही नेतृत्व संभालना है। लक्ष्मण नेतृत्व को संभालने योग्य नहीं हैं।

यह सोचते हुए वशिष्ठ उठे और राम को छाती से चिपका लिये। फिर मुस्कराते हुए बोले—"बेटा राम, भगवान करे तुम्हारी कीर्ति अनंतकाल तक छाई रहे। राम-लक्ष्मण की जोड़ी अमर रहे। तुम्हारा नाम सुनते ही अत्याचारी थर्रा उठें और सज्जन सदाचारी तुम्हें सिर-आँखों पर बिठायें। कष्ट पड़ने पर लोग तुम्हारे नाम की माला जपते रहें। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।"

इसके बाद मुनि ने भरत और शत्रुघ्न से बातचीत की। दूध दुहने और उसके बाँटने को भरत ने धन-संचय और वितरण के रूप में लिया। इसलिये उसे वित्त व्यवस्थापक की उपाधि मिली। शत्रुघ्न ने सफाई की व्यवस्था की थी। अतः उसे स्वास्थ्य-संरक्षक कहा गया।

गुरुकुल की पढ़ाई समाप्त हो चुकी थी। विदा-बेला पर गुरु वशिष्ठ ने चारों भाइयों की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उन्हें नित्य शिकार खेलने की सलाह दी। भरत को शिकार खेलना शिक्षा से मेल खाने वाला कार्य नजर नहीं आया। बोला— "शिकार का शिक्षा से क्या संबंध है ? "तब गुरु

ने समझाया कि शिकार के दो लाभ शिक्षा से जुड़े हैं। पहला लाभ है स्वास्थ्य का सुधार और दूसरा लाभ है निशाना साधने के कौशल में दक्षता प्राप्त करना। दौड़ते हुए पशु पर अचूक निशाना लगाना अत्यन्त उपयोगी शिक्षा है।

अब भरत को अपने मन की सही कसक बाहर निकालनी पड़ी। वह बोला— "क्या निरपराध पशुओं की हत्या करना मनुष्य को शोभा देता है ?" प्रश्न सुनकर मुनि बहुत हँसे और प्रतिप्रश्न किया— "क्या जिस मच्छर ने तुम्हें नहीं काटा है उसे निरपराध मानकर अपने महल में रहने दोगे ?" क्या विश्वामित्र को सताने वाले निशाचर को मैं हलुआ खिलाऊँ ? बेटे, बनैले सुअर किसान की फसल को चौपट कर देते हैं। बाघ हिरनों की हत्या रोज करते हैं। क्या ये निरपराध हैं ? दूसरी बात यह है कि प्राकृतिक परिवेश में संतुलन रहना चाहिये। अगर हिरन या सूअर या बाघ जरूरत से ज्यादा हो जायेंगे तो प्राकृतिक संतुलन बिगड़ जायेगा। तुम्हें इस पर सोच विचार करना चाहिये।

मुनि ने बात समाप्त करके सब राजकुमारों को आशीर्वाद दिया। सब कुमार खुशी-खुशी राजमहल को चले गये।

# 4

# युद्धाचार्य की छत्र-छाया में

विश्वामित्र महामुनि ज्ञानी।
बसहि विपिन शुभ आश्रम जानी।।

विश्वामित्र मुनियों में श्रेष्ठ हैं। मुनि कष्ट सहकर अपने ध्येय को पूरा करने में लगे समर्पित तपस्वी होते थे। वह युद्धकला के परम ज्ञानी थे। उनका कार्य युद्ध के लिये हथियार बनाना और अनुसंधान करके नये शस्त्र तैयार करना था। अपनी भट्टी को जाग्रत रखने के ईंधन की अबाध पूर्ति जरूरी समझते थे। अत: वन में आश्रम बनाया।

देखत जग्य निसाचर धावहिं।
करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं।।

चोरी, डाका, लूट-खसोट जैसे काला धंधा करने वाले निशाचर कहलाते थे। वे यह मानते थे कि पाप और पुण्य कुछ नहीं है। धनी लोगों ने अपने बचाव के लिये ये शब्द गढ़े हैं। मरने के बाद फिर दूसरा जन्म नहीं होता। इस जन्म में ही ऐश कर लो। पैसा पास नहीं है तो कर्ज ले लो या छीन लो। परन्तु अपने सुख-भोग में कमी नहीं होनी चाहिये।

यज्ञ में विश्वामित्र हथियार बनाते थे जो निशाचरों से लड़ने में काम आते थे। अत: निशाचर यज्ञ की सामग्री में पत्थर-मिट्टी डालते थे और यज्ञकर्ता पर पत्थर फेंकते थे। विश्वामित्र इन असुरों के उपद्रव से बहुत परेशान रहते थे। जीवन दूभर हो गया था।

परेशानी के इस आलम में वशिष्ठ मुनि की चिट्ठी मिली तो विश्वामित्र का कलेजा ठंडा हो गया। वह अवधपुरी को चल दिये। वहाँ पर मुनि वशिष्ठ के साथ विचार-विमर्श होने लगा। योजना के प्रारूप में कुछ संशोधन हुए और कुछ नये सुझाव शामिल हुए। घंटे-सवा घंटे बाद बाहर निकले तो उनका चेहरा खिल रहा था। नाश्ता करने के बाद दोनों मुनि राजमहल की ओर चल दिये।

राजा दशरथ ने सुना कि मुनि विश्वामित्र आये हैं तो उसने मुनि का बहुत आदर-सत्कार किया और चारों पुत्रों से चरण वंदना कराई। फिर राजा ने पूछा—

केहि कारन आगमन तुम्हारा।
कहहु सो करत न लावउं बारा।।

महामुनि, मेरे लिये क्या आज्ञा है ? आप जो कहेंगे वही तुरंत कर डालूँगा। तब विश्वामित्र बोले— "राजन्! दुराचारी असुर मेरे यज्ञ कर्म में बाधा डालते हैं। मेरा यज्ञ विध्वंस हो जाता है। वे नहीं चाहते कि मेरा यज्ञ पूरा हो। मैं अपने यज्ञ की रक्षा के लिये राम और लक्ष्मण को ले जाना चाहता हूँ। ये दोनों भाई फुर्तीले नौजवान हैं। इनका सुडौल शरीर और दमकता चेहरा देखकर उनकी हिम्मत टूट जायेगी। मैं इनको युद्धकला सिखा दूँगा। आपका नाम रोशन हो जायेगा। इससे हम दोनों की भलाई है।"

असुरों का नाम सुनते ही राजा का दिल पीपल के पत्ते की तरह काँपने लगा। उसने सोचा कि यह मुनि मेरे बेटों की जान लेना चाहता है। इसलिये कहने लगा— "मुनिराज, मेरी धरती, गायें, धन, खजाना या राज्य कुछ भी माँग लीजिये। मैं देने को तैयार हूँ। आप चाहें तो मैं खुद आपके साथ चलूँगा और युद्ध में मेरे प्राण भले ही चले जायें किन्तु

आपके यज्ञ की रक्षा करूँगा। परन्तु पुत्रों को नहीं दे सकूँगा। दुष्ट असुर घोर लड़ाके हैं। उनके डर से बड़े-बड़े योद्धा काँप जाते हैं। मेरे बेटे अभी किशोर हैं। वे उन डरावनी शक्ल के क्रूर असुरों का मुकाबला नहीं कर सकेंगे।"

मुनि वशिष्ठ ने देखा की कार्य बिगड़ रहा है तो वह बीच में बोल उठे— "मुनि विश्वामित्र अपना मंतव्य आपको ठीक समझा नहीं पाये। मुनि के यज्ञ को भंग करने के लिये डरावने और क्रूर असुर नहीं आते। अगर ये चाहते तो मिथिला के राजा को या उसकी फौज को माँग लाते। मुनि खुद युद्धकला के पारंगत हैं। ये स्वयं फौज का नेतृत्व संभाल लेते। असल में यज्ञ को भंग करने के लिये शैतान, चोर-उचक्के आते हैं। वे ईंट-पत्थर फेंकते हैं। प्रयोग की कढ़ाई में मिट्टी-कंकड़ डाल देते हैं। इसलिये आप बिल्कुल मत घबराइये। शैतानों को डराने-धमकाने का कार्य करना है। लड़ने-भिड़ने की नौबत ही नहीं आती। दूसरी बात यह है कि राजकुमारों को युद्धकला सिखानी बहुत जरूरी है। निशाचरों ने सारा दक्षिण भारत जीत लिया है। अब ये उत्तर की ओर बढ़ना चाहते हैं। अवधपुरी के दक्षिण की ओर मारीच का राज्य है। वह रावण का मामा लगता है। हो सकता है निशाचर उत्तर की तरफ बढ़ें। राम-लक्ष्मण युद्ध कला सीख लेंगे तो सफलता पूर्वक दुश्मन को हरा सकेंगे। अपना यह फायदा मैंने सोचा था। ये दोनों भाई युद्धकला सीखने को राजी भी हैं। इन्होंने खुद ही यह इच्छा मुझे बताई थी। आप इनसे पूछ लीजिये।"

मुनि वशिष्ठ के समझाने से राजा का संदेह दूर हो गया और राम-लक्ष्मण को विश्वामित्र के साथ भेजते हुए यह निवेदन किया—

मेरे प्रान नाथ सुत दोऊ।
तुम्ह मुनि पिता आन नहि कोऊ।।

वशिष्ठ मुनि की योजना में जो नया पहलू जुड़ा था वह था जनकनंदिनी के साथ राम का विवाह कराना। मुनि विश्वामित्र को तीन कार्य सौंपे गये : (1) राम को कुशल सेनाध्यक्ष के रूप में तैयार करना, (2) लक्ष्मण को हुतात्या कर्मठ के रूप में ढालना और (3) राम के विवाह के अनुकूल परिस्थितियों को पैदा करना।

सबसे पहले मुनि ने राम और लक्ष्मण को शस्त्रास्त्र-संचालन सिखाना शुरू किया। परंपरागत हथियारों को चलाना सिखाने के साथ अपने नये विकसित हथियारों को चलाने, उनकी मरम्मत और रख-रखाव का भरपूर अभ्यास कराया। लक्ष्मण को हथियार चलाने का प्रशिक्षण लेने के साथ-साथ रात को दो घंटे आश्रम की पहरेदारी भी करनी पड़ती थी। धीरे-धीरे पहरेदारी की अवधि बढ़ती रही। इस प्रकार लक्ष्मण को कष्ट सहने की आदत पड़ गई।

आयुध सर्व समर्पि कै प्रभु निज आश्रम आनि।
कंद मूल फल भोजन दीन्ह भगति हित जानि।।

जिस-जिस हथियार की ट्रेनिंग मुनि देते थे उसको राम और लक्ष्मण को सौंप देते थे ताकि उसका अभ्यास करते रहें। ट्रेनिंग के बाद दोनों भाइयों को पौष्टिक भोजन कराते थे जिसमें कंदमूल और फलों को अवश्य शामिल किया जाता था। इस प्रकार मुनि ने समस्त शस्त्रास्त्र दोनों को सौंप दिये।

जब विश्वामित्र अपने प्रशिक्षण से संतुष्ट हो गये तो उन्होंने चित्रकूट से अत्रि मुनि और उनकी पत्नी अनुसूया को बुलवाया। उन दोनों को अपने कार्य का परिचय कराया और उनके कार्य के संबंध में चर्चा की। मंत्रणा के बाद दोनों जनकपुरी चले गये। अत्रि मुनि राजा जनक के साथ

आध्यत्म पर चर्चा चलाते रहे और अनुसूया ने जनक नंदिनी की शिक्षा का भार संभाला।

अनुसूया ने सीता को पतिव्रत धर्म सिखाया। पतिव्रता स्त्री का एक ही धर्म और एक ही व्रत है कि मन और कर्म से पति की सेवा करे। किसी भी सूरत में पति का साथ न छोड़े। उसने महारानी कैकेयी की मिसाल दी कि उस रानी ने युद्ध में भी अपने पति का साथ नहीं छोड़ा था। इस तरह सीता का मस्तिष्क-मार्जन करके अपने पति के साथ चली गई।

इसके बाद मुनि विश्वामित्र ने जनक के पुरोहित शतानंद के कान में एक मंत्र फूँका। मंत्र सटीक निकला और वह राजा जनक को आश्वस्त करने में सफल रहा। जनक को यह सर्वथा उपयुक्त लगा कि उसकी बेटी का विवाह किसी वीर युवक से होना चाहिये। वीरता के प्रमाण के रूप में उसने शिव के दिये हुए धनुष को चलाने की क्षमता निश्चित की।

अब मुनि ने दोनों भाइयों को भारोत्तोलन सिखाने लगे। पहले हल्के भार उठवाये और धीरे-धीरे वजन बढ़ाते गये। गोल, चौकोर, लंबे, तिरछे सभी प्रकार के भारी वजन उठाने का अभ्यास हो गया तो भारी से भारी धनुष उठाकर चलाने का अभ्यास कराया। दोनों भाई जनक के घर में रखे हुए धनुष से भी ज्यादा भारी धनुषों को चलाने लगे। अभ्यास में अद्भुत शक्ति है। प्रत्येक प्रकार का कौशल अभ्यास करने से ही सीखा जाता है। इसलिये, कहा जाता है कि अभ्यास ही गुरु है। अभ्यास ने दोनों भाइयों को भारी बोझ उठाने में दक्ष बना दिया।

अंत में सेनानायक बनाने वाली युद्ध नीति सिखाने की बारी आई। मुनि बोले—"प्रत्येक युद्ध का एक ही लक्ष्य

होता है शत्रु पर विजय। जीतने वाले को जनता सिर आँखों पर बिठाती है, उसका यशोगान करती है और इतिहास के पन्नों में उसकी महिमा को बखाना जाता है। हारने वाले की दुर्गति होती है। वह कुचल दिया जाता है। इस कहावत को गाँठ में बाँध लो कि युद्ध में और प्यार में सब कुछ जायज है। छल से या बल से, छिप कर या अंधेरे में, धोखे से या धूर्तता से अथवा मार कर छिप जाने से विजय मिलती है तो उसी तरकीब से शत्रु का नाश करो। नहीं तो जीवन-पर्यन्त शत्रु की गुलामी करने की कमर कस लो।

युद्ध के मूल लक्ष्य को समझाने के बाद मुनि ने युद्ध की नीतियों पर प्रकाश डाला और बताया कि युद्ध की चार नीतियाँ हैं—साम, दाम, दंड और भेद। यह सुनकर लक्ष्मण बोल पड़ा—"गुरुदेव, ये तो राजनीति है। गुरु वशिष्ठ इसको हमें भली भाँति समझा चुके हैं। साम का अर्थ है समझाना। समझाने से शत्रु हमारी बात क्यों मानने लगा। हर आदमी का दृष्टिकोण अलग-अलग होता है। जब कोई भी आदमी दूसरे के समझाने से नहीं मानता तो शत्रु कैसे मान लेगा ?"

मुनि ने लक्ष्मण को शाबाशी दी और बोले—"बेटा, तुमने गुरु वशिष्ठ की बातों को ध्यान से सुना है और उनका सही तात्पर्य समझ गये हो। परन्तु राजनीति में इन चार शब्दों का जो अर्थ है वह युद्धनीति में नहीं है। युद्धनीति में साम का अर्थ है काला झूठ जो कोरा धोखा हो। प्रचार में वह शक्ति है कि बार-बार बताने से बड़े से बड़ा झूठ भी सच लगने लगता है। चतुर सेनाध्यक्ष सबसे पहले इसी हथियार को चलाते हैं और इसी के बल पर कामयाबी हासिल कर लेते हैं।"

लक्ष्मण ने पूछा कि इस हथियार को चलाने का क्या तरीका होगा ? तो मुनि बोले कि प्रत्येक युद्ध में शत्रु आपसे

कमजोर होगा या अधिक बलवान होगा। यदि शत्रु कमजोर है तो यह खबर फैलाओ कि आप में इतना प्रचंड बल है कि शत्रु को पीस कर रख दोगे। प्रजा में यह प्रचार करो कि आप प्रजा के सच्चे हितैषी हैं। यदि आप कमजोर हैं तो शत्रु को अहसास कराओ कि आपके परिवार में फूट पड़ गई है। आपको राज्य से निकाल दिया है और आप मारे-मारे फिर रहे हैं। आप चुपके-चुपके युद्ध की तैयारी करते रहो ताकि शत्रु को भनक न लगे। फिर रात के अंधेरे में शत्रु पर धावा बोल दो। शत्रु बेखबर होगा और मारा जायेगा।

फिर मुनि ने दाम का अर्थ भटकाना बताया। पैसा, पद या परोक्ष लाभ का झाँसा देकर शत्रु पक्ष के किसी अफसर या मामूली सैनिक से शत्रु का कोई न कोई सूत्र प्राप्त किया जाता है। फिर उसी सूत्र के द्वारा आगे बढ़ने की कला का उपयोग किया जाता है। लोभ मानव-स्वभाव की मूलभूत कमजोरी है। इससे शायद ही कोई बच सकता है। हाँ, प्रत्येक की कीमत अलग-अलग होती है। चतुर लोग उस कीमत को भाँप लेते हैं।

दंड की बात चलने पर लक्ष्मण बोला—"गुरुदेव, राजनीति में दंड का अर्थ है सजा और सजा वही दे सकता है जिसे सजा देने का अधिकार प्राप्त हो। शत्रु को दंड देने का अर्थ हुआ उसे पराजित करके पदच्युत करना। परन्तु यह तो कोई नीति नहीं है। इसका गूढ़ अर्थ समझाइये।"

तब मुनि बोले—"दंड युद्धनीति की एक विधा है जिसके द्वारा शत्रु को महत्वपूर्ण सुविधाओं से वंचित करना।" महत्वपूर्ण सुविधायें हैं— भोजन, पानी, शस्त्रास्त्र, संचार और मुख्यालय। खाद्य सामग्री और जल आपूर्ति को बाधित करना, संचार साधनों को छिन्न-भिन्न करना और मुख्यालय को घेर लेना आदि उपायों के द्वारा शत्रु की

शक्ति को नष्ट किया जाता है। ये युद्ध की दंडात्मक नीति मानी जाती है।

अब राम ने प्रश्न उठाया—"गुरुजी, शत्रु की सेना पूरे राज्य में फैली होती है। मुख्य जगहों पर छावनी बनाई जाती है। अगर शत्रु के मुख्यालय को घेरा गया तो दूसरी छावनियों की फौज पीछे से आक्रमण करेगी और घेरा डालने वाला चारों तरफ से घिर जायेगा। इन बातों पर विचार करने से मुख्यालय को घेरने का उपाय कारगर होता दिखाई नहीं देता।"

मुनि राम के बुद्धि-चातुर्य से बहुत खुश हुए और राम की प्रशंसा की। फिर बोले— "छावनियाँ बनाने के एक उद्देश्य तो यही होता है कि जरूरत पड़ने पर एक छावनी से कुमक दूसरी जगह पहुँचाई जा सके और दूसरा उद्देश्य यह भी होता है कि तात्कालिक संकट से निबटा जा सके। परंतु इस व्यवस्था के लिये मुख्यालय ही आदेश देता है। केन्द्र की इजाजत के बिना चौकी खाली करना खतरे से खाली नहीं है क्योंकि शत्रु इस चौकी पर कब्जा कर लेता है तो उसे मजबूत शरणस्थली मिल जायेगी। मुख्यालय पर कब्जा हो गया तो शत्रु के पास हथियार डालने के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं रहेगा।

अंत में भेद नीति पर चर्चा चली। मुनि ने बताया कि युद्धनीति में भेद का अर्थ है छेद करना। जिस तरह छेद किसी चीज के भीतरी तत्व को निकाल कर दो किनारों को अलग कर देता है ठीक उसी तरह भेद नीति शत्रु के खेमे में दो अलग-अलग स्वार्थ पैदा करके शत्रु को कमजोर कर देती है। परंतु भेद पैदा करने के लिए विशेष चतुराई चाहिये। जिस तरह बहुत बारीक नोंक वाले यंत्र से छेद बनता है उसी तरह भेद पैदा करने वाला कुशाग्र बुद्धि वाला

व्यक्ति होना चाहिये। यह जोखिम भरा कार्य है। परन्तु है बहुत ही सशक्त उपाय। इसके द्वारा विजय सुनिश्चित हो जाती है।

इसके बाद मुनि ने आदेश दिया कि युद्ध नीति पर दोनों भाई अच्छी तरह विचार-विमर्श करें और अलग-अलग आलेख तैयार करें।

दोनों भाइयों ने आलेख तैयार किये। राम ने अपने आलेख में दाम और दण्ड की युद्ध-नीतियों को विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध किया। विपरीत लक्ष्मण के आलेख में साम और भेद नीतियों पर बल दिया गया। इन आलेखों में दोनों भाइयों के स्वभाव का भेद स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था।

मुनि ने देखा कि राम ने कम जोखिम उठा कर अधिक लाभ उठाने की बात समझाई है। परन्तु लक्ष्मण को अक्खड़पन अधिक पसंद है। इस प्रकार दोनों भाई एक दूसरे के परिपूरक हैं। सफलता-प्राप्ति के लिये दोनों का सहयोग आवश्यक है। अतः उन्होंने भाइयों को यही समझाया कि वे सदा साथ-साथ रहें।

# 5

# धनुष यज्ञ में दांपत्य-बंधन

प्राचीन काल में दूसरों की भलाई के कार्यों को यज्ञ कहते थे। मिथिला के राजा जनक ने अपनी बेटी के विवाह के लिये यह शर्त लगाई थी कि जो राजा उनके धनुष पर बाण चढ़ाकर खींच सकेगा उसी वीर के साथ सीता का विवाह होगा। इसीलिये सीता के स्वयंवर का नाम धनुष यज्ञ हो गया।

धनुष यज्ञ से एक दिन पहले मुनि विश्वामित्र ने दोनों भाइयों को सूचना दी कि कल जनकपुरी में राजा जनक की बेटी का स्वयंवर है। इसमें एक धनुष का संधान करना पड़ेगा। तुम लोग इस तमाशे को देखकर खुश होगे। आओ तुम भी वह तमाशा देखने चलो।

धनुष जग्य सुनि रघुकुल नाथा।
हरषि चले मुनिवर के साथा।।

जनकपुरी में मुनि विश्वामित्र शहर के बाहर एक बाग में ठहर गये। जब राजा जनक ने सुना कि महामुनि आये हैं तो वह दौड़ा-दौड़ा गया और मुनि को साथ लिवा लाया और अपने खास अतिथि गृह में ठहरा दिया। लक्ष्मण के मन में बार-बार एक सवाल कौंध रहा था। मुनि ने हमें भारोत्तोलन और धनुष उठाने का अभ्यास क्यों कराया था ? इस प्रश्न का एक ही उत्तर उसकी समझ में आता था। शायद मुनिवर यह चाहते हैं कि यदि मौका लगे तो धनुष यज्ञ में विजय-लक्ष्मी हमारे हाथ लगे। शायद मुनि सीता का

विवाह राम भैया के साथ कराना चाहते हैं। इस जिज्ञासा ने लक्ष्मण के मन में कुलबुलाहट मचा दी।

अब लक्ष्मण का मन बहुत डाँवाडोल होने लगा। उसने राम से कहा मेरे मन में जनकपुरी देखने की प्रबल इच्छा है। गुरुजी से आज्ञा ले लीजिये और दोनों भाई जनकपुरी की बनावट देखने चलेंगे। लक्ष्मण की आकुलता देखकर राम तुरंत मुनि विश्वामित्र के पास गये और बोले।

नाथ लखन पुर देखन चहहीं।
प्रभु सकोच बस प्रगट न कहहीं॥

मुनि यह सुनकर प्रसन्न हुये। उन्होंने तुरंत स्वीकार कर लिया और उन्हें बता दिया कि नगर के पूर्वी भाग में यज्ञशाला है जहाँ पर धनुष रखा हुआ है। यदि इच्छा हो तो उस धनुष को भी देखने निकल जाना। गुरु की आज्ञा पाकर दोनों भाई यज्ञशाला में जा पहुँचे।

भगति हेतु सोइ दीनदयाला।
चितवत चकित धनुष मखशाला॥

वे यज्ञशाला और धनुष को देखकर अचंभे में पड़ जाते हैं और विश्वामित्र का स्नेह देखकर मुग्ध हो जाते हैं। ऐसा धनुष वे अनेक बार उठा चुके हैं।

मुनि विश्वामित्र के स्नेह से दोनों भाई भाव-विह्वल हो जाते हैं। मुनि ने उन्हें धनुष उठाने की कला सिखा दी है। अन्य लोगों को ऐसी ट्रेनिंग नहीं मिली है। मुनि बड़े दूरदर्शी हैं। अपने शिष्य को वरमाला पहनते देखना चाहते हैं। दोनों भाई पूरी तरह आत्मविश्वास से उत्साहित हैं। उत्साह से प्रफुल्लित दोनों वापिस लौटे।

आज स्वयंवर का दिन है। राजा लोग यज्ञशाला में पहुँच गये हैं। राजा जनक के पुरोहित शतानंद आकर

विश्वामित्र को यज्ञशाला पहुँचने का निमंत्रण देते हैं। विश्वामित्र दोनों भाइयों को जनक के निमंत्रण की सूचना देते हैं और कहने लगते हैं कि चलो—

सीय स्वयंवरु देखिअ जाई।
ईसु काहि धौं देई बड़ाई॥

मुनि के मुख से निकले ये उद्‌गार उनकी मनोकामना को प्रगट कर रहे हैं। मुनि की भावना को पहचान कर आत्मविश्वास से भरा हुआ लक्ष्मण बोल पड़ता है कि गुरुवर, आपके शिष्य को ही यश मिलेगा। उत्तर सुनकर मुनि प्रसन्न हो जाते हैं और आशीर्वाद देते हैं। विजय का विश्वास सफलता प्राप्ति का प्रबल सहायक है।

राजा जनक यज्ञशाला में पहुँचता है और अपनी प्रतिज्ञा की घोषणा कराता है। जो वीर पुरुष यज्ञशाला में रखे हुए धनुष से निशाना लगा देगा उसी के साथ अपनी बेटी सीता का विवाह कर दूँगा। घोषणा सुनकर राजा लोग धनुष चढ़ाने आते हैं, किन्तु कोई भी भारी धनुष को उठा नहीं पाता। हरेक आँखें नीची करके लौट जाता है।

तमकि ताकि ताँकि सिवधनु धरहीं।
उठइ न कोटि भाँति बल करहीं॥

सभी राजाओं का यही हाल हुआ। यह देखकर राजा जनक को बड़ी घबराहट हुई। सोचने लगे कि मेरी प्यारी बेटी का विवाह कैसे होगा ? राजा को यह आशा नहीं थी कि मुनि विश्वामित्र के नौजवान शिष्य धनुष को उठा सकेंगे। इसलिये, उनसे धनुष उठाने की बात ही नहीं चलाई। राजा की व्याकुलता अब क्रोध के रूप में उभरी। क्रोध के आवेश में राजा के मुँह से अत्यन्त कठोर वचन निकल पड़े : "अब कोई राजा वीरता का अभिमान न करे। सारे राजा कायर हैं। केवल वीर होने का ढोंग बनाये फिरते हैं।

अगर मुझे यह मालूम होता कि पृथ्वी पर कोई शूरवीर नहीं रहा, तो मैं अपनी बेटी के विवाह के लिये ऐसी शर्त न लगाता। अब मैं अपना प्रण छोड़ता हूँ तो पाप का भागी बनता हूँ। नहीं छोड़ता हूँ तो मेरी बेटी कुँआरी रह जायेगी। हाय, मैं क्या करूँ, क्या न करूँ।"

राजा जनक की मर्मान्तक पीड़ा का आर्तनाद सुनकर सब लोग दुखी हो गये। परन्तु लक्ष्मण क्रोध से तिलमिला उठा। भौंहें टेढ़ी हो गईं और होठ फड़कने लगे। लक्ष्मण का क्रोध स्वाभाविक था। जनक ने दोनों भाइयों के स्वाभिमान को गहरी चोट पहुँचाई थी। ऐसी चुनौती को लक्ष्मण जैसा महावीर कैसे अस्वीकार कर सकता था। उससे रहा न गया।

लक्ष्मण उठकर खड़ा हो गया और तमतमाते चेहरे से बोल उठा। "राजा जनक ने बहुत अनुचित बात कह डाली है। रघुकुल के किसी वीर के सामने ऐसी कठोर बात कोई नहीं कहता है। अगर मुझे मेरे गुरु और मेरे बड़े भाई आज्ञा दें तो मैं इस धनुष को कच्चे घड़े की तरह तोड़-मरोड़ कर टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगा। यह धनुष तो पुराना है और बहुत जर्जर हो चुका है। अगर नये दस ऐसे धनुष लाकर रख दें तो उन्हें भी तोड़ दूँगा। राजा जनक को यह समझ लेना चाहिये कि भारत भूमि ने सदा वीरों को जन्म दिया है। सारा संसार भारत के वीरों का लोहा मानता है। भारत माता वीरता-विहीन कभी नहीं रही, किन्तु धूर्तता-विहीन जरूर रही है। अगर राजा जनक को विश्वास न हो तो हमें आजमा कर देख लें।"

लक्ष्मण की क्रोधभरी वाणी राजा जनक को शहद जैसी मीठी प्रतीत हुई। परंतु संकोच के कारण मुँह से आवाज नहीं निकली। मुनि विश्वामित्र मन ही मन बहुत प्रसन्न हुए। मौका देखकर उन्होंने कहा :

उठहु राम भंजहु भव चापा।
मेटहु तात जनक संतापा।।

मुनि ने लक्ष्मण से धनुष उठाने को नहीं कहा क्योंकि मुनि सीता का विवाह भावी राष्ट्रनायक से कराना चाहते हैं। वैसे भी राम बड़े भाई होने के कारण विवाह के अधिकारी थे। गुरु की आज्ञा पाते ही राम उठे और मुनि के चरणों में सिर झुकाया। फिर धनुष की ओर कदम बढ़ा दिये।

लक्ष्मण ने देखा कि राम ने धनुष की तरफ नजर डाली है तो उसे जनक को लज्जित करने की शरारत सूझी। जोर से धरती पर लात मारी ताकि लोगों का ध्यान उसकी तरफ जाय। फिर जोर से बोला, "सब लोग सँभल कर बैठें और अपने कानों में रूई ठूँस लें। यह धनुष पुराना है खींचते ही टूट जायेगा। टूटते समय जोर की ध्वनि होगी। जिससे धरती हिल जायेगी और लोगों के कान के परदे फट जायेंगे।"

राम ने धनुष को बड़ी फुर्ती से उठा लिया और धनुष पर बाण चढ़ाकर उसे जोर से खींचा। धनुष बहुत पुराना हो चुका था। चट-चट की ध्वनि हुई और उसके दो टुकड़े हो गये। राम ने दोनों टुकड़े धरती पर पटक दिये। धम्म की ध्वनि के साथ खेल खत्म हो गया।

धनुष टूटते ही जनकपुरी में खुशी की लहर दौड़ पड़ी। लोग खुशी से झूम उठे, बाजे बजने लगे और मंगल गीत गाये जाने लगे। सीता अपनी सहेलियों के साथ आई और राम के गले में वरमाला डाल दी। सीता-स्वयंवर की प्रथा पूरी हुई। जनक प्रफुल्लित हो उठे।

# 6

# लक्ष्मण-परशुराम संवाद

जीवन की पगडंडी बहुत टेढ़ी-मेढ़ी चलती है। कई बार लगता है कि हम सफलता तक पहुँच चुके। तभी अचानक कोई न कोई विघ्न पड़ जाता है और हम भौंचक्के रह जाते हैं। कहते हैं प्याले और होठों के बीच में कई फिसलनें हो सकती हैं। प्याला मुँह तक ले जाने के लिये उठाया ही था कि किसी कीड़े ने काट लिया या बदन में खुजली पैदा हुई या दूध में मक्खी गिर गई। इसी तरह की एक बाधा सीता के विवाह में भी आ खड़ी हुई।

लम्बा-चौड़ा शरीर, चौड़ी छाती और बैल जैसे कंधे। माथे पर त्रिपुंड है जो आगंतुक के शिव-भक्त होने की सूचना दे रहा है। गले में लटका जनेऊ उसको ब्राह्मण बता रहा था। सिर की जटा और वल्कल वस्त्रों से वह मुनि लग रहा था। किंतु कंधे पर टँगा फरसा और हाथ में लगे धनुष बाण उसे योद्धा कह रहे थे। अजीब भेष बनाये यह अधेड़ आगंतुक परशुराम नाम वाला एक प्रसिद्ध योद्धा है।

परशुराम का स्वभाव चिड़चिड़ा था। गुस्सा उसकी नाक पर रहता था। उसके आते ही लोग भयभीत हो गये। न जाने किससे उलझ बैठे। सारे राजा झुक-झुक कर प्रणाम करने लगे। राजा जनक ने आकर नमस्कार किया और सीता से भी चरण वंदना कराई। अब परशुराम की नजर इधर-उधर फिरी। उसने देखा कि शिव ने जो धनुष खुश होकर राजा जनक को दिया था वह टूटा हुआ पड़ा है।

इस धनुष से परशुराम का कोई लेना-देना नहीं था। परन्तु उसे अपना दबदबा दिखाने का नायाब मौका मिल गया। उसने झट धनुष से संबंध जोड़ा और रूखे कर्कश स्वर में बोला, "ओ मूर्ख जनक, धनुष किसने तोड़ा है ? यह मेरे गुरु शिव का दिया हुआ धनुष है। धनुष तोड़ने वाला मेरा शत्रु है।

अति रिस बोले वचन कठोरा।
कहु ज़ड़ जनक धनुष कै तोरा।
बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू।
उलटउँ महि जहँ लहि तव राजू।।

कैसी सुंदर भाषा है, कैसा बढ़िया लहजा है। लगता है बोलने वाला खुद को सर्वशक्तिमान सम्राट समझ रहा है। एक-एक शब्द से अभिमान की बू आ रही है। राजा जनक की बोलती बंद हो गई। वह अपने जामाता का नाम कैसे बताये ? हो सकता है यह दुष्ट राम को मार डाले। इसने कई राजा मार डाले हैं।

राम ने देखा कि जनक के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही हैं और सीता थरथर काँप रही है तो उसके हृदय में करुणा का सागर उमड़ पड़ा। अतः चतुरतापूर्ण उत्तर दिया, "भगवन्, शिव के धनुष को तोड़ने वाला आपका ही कोई सेवक है। आप कृपा करके मुझे बतायें कि उसे क्या सजा भुगतनी है।"

राम ने अपनी बात घुमा-फिरा कर कही थी किन्तु यह स्पष्ट झलक रहा था कि अपराधी वह स्वयं ही है और सजा भुगतने को तैयार है। परंतु परशुराम के सिर पर क्रोध सवार था। जहाँ क्रोध आया वहाँ धैर्य गया और धैर्य के जाते ही बुद्धि भी गई। फिर आदमी पागल की तरह व्यवहार करता है।

राम की बात का आशय परशुराम की समझ में नहीं आया। दूसरे आदमी से बात करते समय यह बहुत जरूरी है कि दूसरे के उत्तर को बड़े ध्यान से सुना जाय ताकि उसके मन की भावना समझ सकें। मुँह जो कुछ कहता है वह मन कहलवाता है, मन में उसका चरित्र भरा है, उसकी आदतें भरी हैं। बेहतर यही है कि आप दूसरों की बात ध्यान से सुनें और उसके मन का नक्शा समझ लें। परंतु परशुराम को इतनी फुर्सत कहाँ ? वह अपने दृष्टिकाण से राम के उत्तर को समझता है। उसने अनुमान लगा लिया कि धनुष तोड़ना राम के बूते से बाहर है। यह किसी राजा की करतूत है।

परशुराम उसी लहजे और उसी रुखाई से बोला, "राम, कान खोल कर सुन ले। जिस राजा ने धनुष तोड़ा है वह मेरा कट्टर शत्रु है।" फिर उसने अपनी नजर राजाओं की तरफ घुमाई और ललकार कर बोला, "जिस राजा ने धनुष तोड़ा है वह उठकर मेरे सामने आकर खड़ा हो जाये। नहीं आया तो मैं सब राजाओं को मार डालूँगा।" यह कहकर वह ऐसे तन के खड़ा हुआ मानो जंग जीत चुका हो।

आश्चर्य, महान आश्चर्य। सभी राजा कान दबाकर बैठे थे। किसी ने चूँ तक नहीं की। भय आदमी का सबसे बड़ा शत्रु है। क्या एक आदमी सारे राजाओं को मार सकता था ? यदि सारे मिल कर टूट पड़ते तो वह दो-तीन को मार पाता किन्तु उसे भी अपनी जान से हाथ धोना पड़ता। मौत का भय और सहयोग की कमी के कारण राजाओं को अपमान पीना पड़ा।

परशुराम के अनर्गल प्रलाप को सुनकर लक्ष्मण को हँसी आ गई। फिर एक चुटकी ली। बोला, "मान्यवर, मैंने तो बचपन में बहुत से धनुष तोड़े थे। परन्तु आपने कभी क्रोध नहीं किया था। राजा जनक का धनुष टूटने पर

आपको बहुत दुख हो रहा है। इस धनुष से इतना ममत्व आपको किस कारण है ?" लक्ष्मण का व्यंग भी परशुराम की समझ में नहीं आया। लक्ष्मण का तात्पर्य था कि धनुष जनक का टूटा है और दर्द आपके पेट में हो रहा है। परंतु परशुराम को लक्ष्मण की दखलअंदाजी ही पसंद नहीं आई। लक्ष्मण को धमकाते हुए बड़ी ऐंठ से उत्तर दिया।

रे नृप बालक कालवस, बोलत तोय न संभार।
धनुही सम त्रिपुरारी धनु, विदित सकल संसार।।

ओ छोकरे, क्या तू मरना चाहता है ? तुझे बात करने की तमीज नहीं है, जो संसार-प्रसिद्ध शिव धनुष की तुलना अपने बचकाने निकृष्ट धनुहियों से कर रहा है। तू अपना व्यर्थ का बकवास बंद कर दे।

लोगों को मारने की धमकी देना परशुराम का स्वभाव बन चुका था। वह स्वभाव से मजबूर था। परंतु मौत की धमकी से वीर लोग नहीं डरते। यह कायरों को ही डरा सकती है। लक्ष्मण को यह मालूम हो गया कि परशुराम डींग हाँकता है। इसलिये, परशुराम की अशिष्टता पर क्रोध नहीं आया। किन्तु फिर दूसरा व्यंगबाण छोड़ बोला, "श्रीमान्, धनुष टूटने से आपकी कितनी हानि हुई है ? ज्यादा हानि तो हुई नहीं होगी। क्योंकि पुराना धनुष था। हाथ से उठाया ही था कि टूट गया। इसमें राम का कोई दोष नहीं है।"

लक्ष्मण की कटूक्ति सुनते ही परशुराम के तन-वदन में आग लग गई। क्रोध से उबलते हुए उसने अपना फरसा पकड़ा। किंतु सामने ही विश्वामित्र को खड़े देखा तो उसका हाथ रुक गया। फरसा तो नहीं उठा परंतु जीभ उठ गई। बोला, "अरे मूर्ख छोकरे, तू मुझे नहीं जानता। मैं बहुत क्रोधी हूँ और राजाओं का दुश्मन हूँ। मैंने बहुत से राजाओं

को मार डाला है। तू किस गिनती में है। मैंने तुझे बच्चा समझ कर ही जिन्दा छोड़ दिया है। तू यह मेरा फरसा देख ले। ज्यादा चीं-चपड़ की तो इसी फरसे से तेरी गर्दन उड़ा दूँगा। तेरे माँ-बाप रोते फिरेंगे।

मातु पितहि जनि सोच बस, करसि महीस किसोर।
गर्भन्ह के अर्भक दलन, परसु मोर अति घोर॥

पागल छोकरे, तू अपने माँ-बाप को क्यों रुलाना चाहता है। मेरा यह फरसा बहुत भयानक है। यह गर्भ में पल रहे बच्चों का भी वध करता है।

यह गीदड़-भबकी थी जो परशुराम ने लक्ष्मण को दे डाली। परंतु लक्ष्मण कोई बच्चा न था जो डर जाता। नौजवानी का नया खून था। विश्वभर के नामी-गिरामी युद्धाचार्य विश्वामित्र से शस्त्र चलाना सीख चुका था। उसमें अपूर्व आत्मविश्वास भरा था। स्वयं विश्वामित्र मौजूद थे और बड़ा भाई राम भी पास खड़ा था। उसे ऐसी धमकियों की क्या परवाह थी। उसे मालूम था कि बूढ़े लोगों को अपनी यश-गाथा सुनाने की आदत पड़ जाती है। किसी भी बूढ़े से बात करिये वह अपनी राम कहानी बताना शुरू कर देगा। परशुराम को भी लक्ष्मण ने ऐसा ही समझ लिया। इसलिये वह शांत ही रहा, क्रोध नहीं आया।

गर्वोक्ति सुनकर लक्ष्मण को हँसी आ गई। फिर करारा जवाब दिया : "मुनीश्वर, आप महान योद्धा हैं। इसीलिये मुझे बार-बार फरसा दिखाकर बंदर घुड़की दे रहे हैं। परन्तु आपका आचरण वैसा ही है जैसा कोई अज्ञानी पहाड़ को उड़ाने के लिये फूँक मारने लगे। आप भ्रमवश मुझे दूधपीता बच्चा समझ बैठे हैं। आपकी निगाह में मेरी शक्ति छुई-मुई के पौधे जैसी है जो उँगली छुआते ही मुरझा जायेगी। अपना यह भ्रम निकाल दीजिये। आपका मुनियों जैसा पहनावा

देखकर ही मैंने क्रोध नहीं किया है। अन्यथा आपको आटे-दाल का भाव मालूम हो जाता।"

लक्ष्मण की भाषा अत्यन्त अपमानजनक थी और युद्ध की चुनौती दे रही थी। परशुराम की दशा साँप-छछूंदर जैसी बन गई। अगर युद्ध करने का इरादा करता है तो सामने मुनि विश्वामित्र को खड़े देखता है। अगर युद्ध से बचता है तो सारी इज्जत धूल में मिलने का खतरा है। अब इज्जत बचाने का एकमात्र उपाय मुनि विश्वामित्र से लक्ष्मण की शिकायत करना है। विश्वामित्र के उत्तर से उनका रूख भी मालूम हो जायेगा। यह विचार करके परशुराम ने कहा : "विश्वामित्र! मुझे यह लड़का मंदबुद्धि लगता है। बार-बार समझाने पर भी मेरे बल-प्रताप को नहीं समझ पाया है। इसलिये, मंदबुद्धि ही है। यह कुटिल छोकरा मरना चाहता है और अपने कुल का घातक है। मैं इसके समस्त घरवालों को भी मार डालूँगा तो यह कुल-घातक बन जायेगा। यह उद्दंड और मूर्ख है। अपनी हानि को समझ नहीं पा रहा है। अगर मैंने इसे मार डाला तो आप मुझे दोष मत देना। इसलिये आप इसे बचाना चाहते हैं तो इसे मेरा बल और मेरा प्रताप समझाकर इससे बकवास बंद करा दीजिये।"

शिकायत करना था तो शिष्ट भाषा में कहना था। परंतु परशुराम को अपनी ढलती उम्र का ध्यान ही नहीं था। और न लक्ष्मण के बल पौरुष का ही अंदाज लगाया था। मुनि विश्वामित्र ऐसी शेखी का क्या जबाब देते ? लक्ष्मण को परशुराम की उद्दंडता पर क्रोध आ गया। वह तीखी आवाज मे बोला : "आपकी बड़ाई सुनते-सुनते मेरे कान ऊब गये हैं। यदि आपके प्रताप का कुछ ब्यौरा आप सुना नहीं पाये हैं तो वह भी बता दीजिये। मैं अपना क्रोध रोककर वह भी सुन लूँगा। दूसरों को गाली-गलौच देना आप जैसे बुजुर्ग को

शोभा नहीं देता। यदि आप में कुछ दमखम है तो युद्ध करिये :

सूर समर करनी करहिं कहि न जनावहिं आपु।
विद्यमान रन पाइ रिपु कायर कथहिं प्रतापु।।

बहादुर योद्धा युद्ध में लड़कर अपना शौर्य प्रगट करते हैं। आपकी तरह व्यर्थ का बकवास नहीं करते कि मैं शूरवीर हूँ। जो लोग कायर हैं, वे लड़ाई में अपने शत्रु को अपनी कीर्ति को सुनाया करते हैं।"

हद हो गई। लक्ष्मण ने युद्ध की चुनौती दे डाली। चले थे नमाज को रोजे गले पड़ गये। विश्वामित्र से शिकायत की थी, परन्तु वह कुछ बोले ही नहीं। अब क्या करें ? अब सभी एकत्र लोगों से दुहाई देता हूँ। कोई न कोई जरूर मदद करेगा। यह सोचकर फरसा जोर से हाथ में पकड़ लिया और सबको सुनाने के लिये तेज आवाज में बोला, "सुनो भाई लोगों, आप लोगों में से कोई भी अब मुझे यह दोष मत देना कि मैंने एक बच्चे पर हथियार उठाया। यह छोकरा कड़ुआ बोलता है। इसलिये, मारने में दोष नहीं है। अब तक मैं बालक समझ कर इसको बचाता रहा। परंतु अब यह सचमुच ही अपनी मौत बुला रहा है।"

विश्वामित्र ने देखा कि परशुराम रुआँसा हो गया है। अगर उसकी इज्जत नहीं बची तो फरसा लेकर दौड़ पड़ेगा और लक्ष्मण के हाथों मारा जायेगा। इससे राम के विवाह में विघ्न पड़ेगा। सब लोग मुझे ही दोषी ठहरायेंगे। अतः मीठी आवाज में बोले, "परशुराम जी, बालक का अपराध माफ कर दीजिये। सज्जन लोग बालकों के दोषों पर ध्यान नहीं दिया करते। आप मुनि हैं। मुनियों का स्वभाव क्षमाशील होता है।"

विश्वामित्र ने यह बात परशुराम की इज्जत बचाने की दृष्टि से कही थी। किंतु परशुराम के लिये यह डूबते को तिनके का सहारा सिद्ध हुई। वह अहंकार में भरकर बोला : "मेरे हाथ में तीखी धार वाला यह फरसा है और मैं क्रोधी स्वभाव वाला निर्दयी आदमी हूँ। मेरे सामने ही गुरुद्रोही अपराधी भी खड़ा है। फिर भी मैंने इसका वध नहीं किया। यह सब आपके प्रेमवश होकर नहीं कर पाया। नहीं तो इसकी गर्दन काटकर अपने गुरु के ऋण से मुक्त हो जाता।"

विश्वामित्र ने परशुराम का लम्बा-चौड़ा वक्तव्य सुना तो वह मन ही मन में हँसे और सोचने लगे कि रस्सी जल गई लेकिन ऐंठ नहीं गई। यह आदमी वज्रमूर्ख है। लक्ष्मण ने इसे युद्ध की चुनौती दे डाली है। क्या कोई कमजोर व्यक्ति ऐसी चुनौती देता ? पता नहीं, क्यों यह अपनी शक्ति की झूठी कल्पना करता है ? शायद यह सठिया गया है। भगवान इसकी रक्षा करें।

लक्ष्मण को परशुराम की ऐंठ सहन नहीं हुई। बोला— "आपको गुरु का ऋण चुकाने की भारी चिन्ता है। आइये, मैं ब्याज सहित चुका दूँ। आप किसी वीर योद्धा से भिड़े ही नहीं। बस घर में ही शूरवीरता दिखाते हो। आप मेरे हाथ से जिन्दा बच गये। मुनियों जैसी आपकी वेश-भूषा ने मेरा हाथ रोक लिया।"

राम ने देखा कि परशुराम का बहुत अपमान हो चुका। वीर पुरुष के लिये अपमान मौत से बढ़कर है। अतः बड़े आदर के साथ सांत्वना दी, "प्रभो, यह बालक अबोध है। इसे आपके प्रताप का पता ही नहीं है। नासमझी के कारण आपकी बराबरी कर रहा है। छोटे आदमी उत्पात भी करते हैं। तो बड़े क्षमा कर देते है। गुरु, माँ और बाप अपने बच्चों

की चपलता पर खुश होते हैं। इसकी बातों पर ध्यान मत दीजिये।

वररै बालक एकु सुभाऊ।
इनहि न संत विदूषहिं काऊ।।

राम की शीतल वाणी सुनकर परशुराम ठंडे हो गये और वहाँ से चले गये।

परशुराम के जाने के बाद लोगों की जान में जान आई। वे अब भी परशुराम को महान योद्धा समझ रहे थे। उनके विचार से विश्वामित्र की उपस्थिति से लक्ष्मण बचा था।

इसके बाद जनक ने राजा दशरथ को बुलवाया और विवाह की रस्में पूरी कराईं। राम और सीता के विवाह के समय ही तीनों भाइयों के विवाह कर दिये। राजा जनक की बड़ी भतीजी भरत के साथ और छोटी शत्रुघ्न के साथ ब्याही गई और सीता की छोटी बहिन उर्मिला का विवाह लक्ष्मण के साथ हुआ। विवाह के बाद राजा दशरथ अपने बेटों और बहुओं के साथ खुशी-खुशी अयोध्या वापिस आये। सारे राज्य में खुशी की लहर दौड़ गई।

# 7

# योजना की रूपरेखा

हर बारह साल के बाद प्रयाग में कुंभ का मेला लगता है। इसमें बहुत से विद्वान और साधु-संत इकट्ठे होते हैं क्योंकि यह पर्व बहुत पुण्यजनक समझा जाता है। असल में प्राचीन ऋषियों ने ऐसी परंपरायें इसलिये चलाई थीं ताकि जनता विद्वानों के उपदेश सुनें और धर्म को ज़ीवन में उतार सकें। धर्म-प्रचार के ऐसे साधन ऋषियों की कृपा से हमें प्राप्त हुए हैं।

राम विवाह के बाद कुंभ पर्व का अवसर आया। काफी जनता प्रयाग में इकट्ठी हुई। मुनि भारद्वाज के आश्रम में देश के चोटी के विद्वान पहुँचे। ये थे मुनि वशिष्ठ, मुनि विश्वामित्र, मुनि अत्रि, मुनि वाल्मीकि और मुनि अगस्त्य। इन महान विद्वानों की एक विशेषता यह थी कि इनका जीवन देश के लिये समर्पित था। कुंभ के अवसर पर इनके इकट्ठे होने का एक कारण यह भी था कि योजना के बिखरे हुए सूत्रों को जोड़ दिया जाय।

योजना की जरूरत इसलिये पड़ी कि निशाचर लूट-पाट, छीना-झपटी और चोरी-डकैती करके जनता को परेशान करते थे। इन दिनों उनका अत्याचार बहुत बढ़ गया था क्योंकि लंका का राजा रावण उनकी मदद करने लगा। रावण पुलस्त्य ऋषि का नाती था किन्तु मनमाने सुखों की चाह ने उसे असुर बना डाला। अपने पौरुष से उसने सारे दक्षिणी भारत पर अपना दबदबा कायम कर लिया। अब

उसकी निगाह उत्तर भारत पर पड़ी और ऋषियों को सताना शुरू किया।

असल में यह दो विपरीत विचारधाराओं की टक्कर थी। ऋषि-मुनि सदाचार और कर्त्तव्य-पालन को जीवन का मुख्य उद्देश्य मानते थे और इन्हीं को ईश्वर का स्वरूप समझते थे। यही भारतीय संस्कृति का सही स्वरूप है। इसके विपरीत असुर येन-केन प्रकारेण धन कमाना और ऐश करना जीवन का उद्देश्य बताते थे। ऋषि मुनि भारतीय संस्कृति के पुरोधा हैं। इसलिये, निशाचरों के कोपभाजन बने।

रावण बहुत प्रतापी राजा था। भारत के राजा उसका नाम सुनते ही काँप जाते थे। राजा दशरथ काफी वीर था। परंतु निशाचरों का नाम सुनते ही घबरा गया था। निशाचरों को पराजित करने का एक ही तरीका था कि चुपचाप हमला करके रावण को मार दिया जाय। इसीलिये, ऋषियों ने एक गुप्त योजना बनाई कि रावण का नाश हो और सूत्रधार की हवा का भी पता न लगे। इसी योजना पर विचार करने के लिए योजना के सूत्रधार इकट्ठे हुए।

सब ऋषि एक अर्धचंद्राकार घेरे में बैठ गये। सबसे पहले भारद्वाज मुनि ने बात आरंभ की। वह बोले, "एक कार्य सफल हुआ। मुख्य अधिकारी का चयन हो गया और उसका प्रशिक्षण मुनि विश्वामित्र ने कर दिया। बस उसके साथ फौज भी चाहिये। उसकी भर्ती और ट्रेनिंग की क्या व्यवस्था की जाय और कहाँ पर हो ? इस संबंध में विचार कीजिये।" विश्वामित्र बोले, "जो लोग निशाचरों से भयभीत रहते हैं उन्हें भरती नहीं करना चाहिये। अगर किसी तरह पकड़ा गया तो सारा भेद खोल देगा। हमें ऐसे रंगरूट लेने होंगे जिनका मुख्य गुण साहस हो। यह जिम्मेदारी कौन

लेगा ?" अत्रि बोले, "मेरे गुरुकुल में वनवासी बच्चे पढ़ते हैं। उनके चरित्र-निर्माण में मेरा मुख्य ध्यान उन्हें निर्भीक बनाने पर रहता है। सब बच्चों को एक पद्य रोज पढ़नी पड़ती है।

जीवन यात्रा है बेढंगी मोड़ बहुत से मिलते।
बिखरे बाधाओं के काँटे पैर हमारे छिलते।।
असफलता का फाड़ कलेजा आगे कदम बढ़ाओ।
परमेश्वर है साथ तुम्हारे मत मन में घबराओ।।
निर्णय कर लो बाधाओं से अपनी रार ठनेगी।
डटकर टकराने की हिम्मत निश्चय विजय बनेगी।।

अगर आप लोग उचित समझें तो पंद्रह-सोलह साल के किशोरों की भर्ती करें। मुनि वाल्मीकि, मुनिवर अगस्त्य और मैं आपको रंगरूट दे देंगे। परंतु उनके लिये ट्रेनिंग की अवधि कुछ लम्बी करनी पड़ेगी। यही एक दिक्कत है।

वाल्मीकि—"लम्बी ट्रेनिंग में कोई बुराई नहीं है। किशोरों की हड्डियाँ लचीली होती हैं। पेड़ों पर चढ़ना, गहरे गड्ढों में कूदना और खतरे मोल लेना युवकों का स्वभाव होता है। ट्रेनिंग ज्यादा बढ़िया हो सकेगी। दूसरा बड़ा लाभ यह है कि उनका मस्तिष्क-मार्जन (ब्रेन वाशिंग) बड़ी सरलता से और स्थायी रूप से हो सकेगा।

वशिष्ठ—मुनि विश्वामित्र, आपकी राय में ट्रेनिंग के लिये कितना समय नियत किया जाय ? आपने राम लक्ष्मण की शिक्षा लगभग दो साल में पूरी की थी।

विश्वामित्र—भाईजी, मेरे ख्याल से किशोरों को पहले खेल-कूदों का अभ्यास कराना पड़ेगा। मस्तिष्क-मार्जन भी जरूरी है। इसलिये, छः साल की अवधि पर्याप्त होगी। निशाचरराज से लोहा लेना है। पूरी तैयारी के बिना उसे छेड़ना ठीक नहीं।

अगस्त्य—लंका में पहुँचने के लिये समुद्र पार भी करना पड़ेगा। वहाँ पर शत्रु की जल-सेना निगरानी रखती है। इसलिये, सैनिकों को नौ-सेना की ट्रेनिंग भी लेनी पड़ेगी। इसमें भी कम से कम तीन वर्ष लगेंगे। इस ट्रेनिंग की जिम्मेदारी मेरे ऊपर छोड़िये। गोदावरी नदी के किनारे पर मेरा आश्रम है। घने वन छाये हुए हैं। पास ही पहाड़ी गुफायें हैं।

भारद्वाज—इसका अर्थ यह हुआ कि लगभग दस साल का समय ट्रेनिंग के लिये आवश्यक है। फिर स्थानीय राजाओं से भी संपर्क साधना पड़ेगा क्योंकि फौज का स्थायी पड़ाव लंका से ज्यादा दूर नहीं होना चाहिये। मुनि अगस्त्य इस मामले में आपका क्या विचार है ?

अगस्त्य—दक्षिण में कई छोटे-छोटे राजा हैं। इनमें किष्किंधा का राजा बालि ही बलशाली है। उसके राज्य में निशाचरों का कोई दखल नहीं है। किंतु बालि रावण से मेल-जोल रखता है। खुशी की बात यह है कि बालि ने अपने भाई सुग्रीव को हाल ही में बाहर निकाल दिया है। हमारे लिये यही एक रास्ता है कि बालि को मारकर सुग्रीव को राजा बना दें। सुग्रीव की सेना भी हमें मिल जायेगी और ऋष्यमूक पर्वत की गुफाओं में हमारी सेना पड़ाव लेगी।

वाल्मीकि—फौज को ट्रेनिंग देने की जिम्मेदारी कौन संभालेगा ? क्या मुनि विश्वामित्र के आश्रम में प्रशिक्षण - केन्द्र सुविधाजनक रहेगा ?

भारद्वाज—नहीं भाई। मुनि विश्वामित्र पर असुरों की पैनी निगाह है। ट्रेनिंग का स्थान चित्रकूट होगा जहाँ पर पर्वत की गुफाओं में हजारों लोग छिप सकते हैं। मुनि अत्रि का आश्रम भी काफी लम्बा चौड़ा है जहाँ फौज के लिये रसद सामग्री जमा रखी जा सकती है। ट्रेनिंग देने का भार

स्वयं राम और लक्ष्मण सँभालेंगे। मस्तिष्क-मार्जन मुनि अत्रि करेंगे।

विश्वामित्र—लक्ष्मण बेहद कर्मठ है और अदम्य साहसी है। परंतु उसका विवाह हो चुका है। क्या वह तेरह-चौदह वर्ष तक अकेला रह सकेगा ?

वशिष्ठ—लक्ष्मण में एक विशेषता यह भी है कि वह कर्त्तव्य के सामने किसी को आड़े नहीं आने देता। उसको सही कर्त्तव्य बताने से ही काम बन जायेगा। लक्ष्मण की सहायता के बिना अकेले राम के लिये परेशानी हो जायेगी। रोज परेड करानी है, लम्बी दूरी चलने (रूट मार्च) का अभ्यास कराना है, निंशाना लगाना सिखाना है, फूल-पत्तों से शरीर को छिपाकर चलने का अभ्यास कराना है। फौज के अनेक कार्य हैं जिन्हें लक्ष्मण जैसा कर्मठ मजे से कर सकता है। उसको राजी करने की जिम्मेदारी मेरी है।

योजना के सभी बिन्दुओं पर विचार हो चुका तो सभी मुनि गले मिले और त्रिवेणी में गोता लगाने के बाद अपने-अपने आश्रम को चले गये। उन्हें इस बात पर संतोष था कि योजना के संपूर्ण पहलुओं को अच्छी तरह सोच लिया गया है। कार्य की सफलता के लिये योजना बनाना अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू है।

मुनि वशिष्ठ अवधपुरी लौटे तो लोग उनसे मिलने आये। लक्ष्मण भी मिलने गया और उनसे कुंभ का महत्व पूछा। मुनि ने उसे समझाया कि तीर्थ वे स्थान हैं जहाँ संत लोग रहते हैं। मेलों का महत्व यह है कि लोग वहाँ एक साथ पहुँचें और संतों के उपदेश सुनें। ये लोग अपने-अपने घर जाकर उन्हीं उपदेशों को अपने परिवार को सुनायें और इष्ट-मित्रों को सुनायें। इस तरह ज्ञान-गंगा बहती रहे।

फिर लक्ष्मण ने यह जानना चाहा कि इस कुंभ का मुख्य संदेश क्या है तो मुनि बोले—"बेटा, अधर्म बहुत प्रबल हो गया है। धर्म बहुत कमजोर हो गया है। ऋषियों ने लोगों से धर्म की रक्षा करने के लिये कमर कसने की अपील की है। यदि धर्म नहीं रहा, सदाचार और कर्त्तव्य पालन की मर्यादा नष्ट हो गई तो समाज भी नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा। धर्म ही समाज की रक्षा करता है। न जाने क्यों लोग निशाचरों से भयभीत रहते हैं ? अगर इकट्ठे होकर सामना करें तो अपनी रक्षा कर सकते हैं। निशाचरों के नाश का उपाय करना ही पड़ेगा।

लक्ष्मण—गुरुजी ! आप तो परम ज्ञानी हैं। कई पुस्तकों के लेखक हैं। आपने कोई न कोई उपाय जरूर सोचा होगा। कुंभ के मेले में ऋषियों से सलाह की होगी।

वशिष्ठ—हाँ सोचा भी है और सलाह भी की है। एक नया सैनिक शिक्षा का केन्द्र बनाने का विचार है जिसमें दो-ढाई हजार नौजवानों को शस्त्र चलाना सिखाया जायेगा। जब ये सैनिक तैयार हो जायेंगे तो 'मार और भाग जा' की युद्ध नीति पर चलेंगे। संभव है निशाचरों का प्रकोप कुछ कम हो जाये।

लक्ष्मण—निशाचर चारों तरफ घूमते हैं। ज्योंही उन्हें पता चलेगा कि कोई सैनिक स्कूल चल रहा है, तो वे उस पर धावा बोलेंगे और उस पर कब्जा जमा लेंगे। क्या आपने इस संबंध में भी सोच-विचार कर लिया है ?

वशिष्ठ—लक्ष्मण, तुम बहुत बुद्धिमान हो। तुम इस कार्य में हमारी बहुत सहायता कर सकोगे। क्या तुम धर्म-रक्षा की सेवा में कुछ योगदान कर सकोगे ? क्या तुम अपनी पत्नी और परिवार को छोड़ कर तपस्या कर

सकोगे ? सेवा का समय काफी लम्बा होगा। संभव दस-बारह बर्ष तक घर से दूर अकेले ही जीवन बिताना पड़े। क्या तुम ऐसी कठिन सेवा कर सकोगे ?

लक्ष्मण—गुरुजी, आप बिना हिचक जहाँ चाहे वहाँ पर मेरी सेवा ले सकते हैं। देश की सेवा करने में मुझे बहुत खुशी होगी। दस-बारह साल की बात ही क्या है मैं जीवन भर सेवा करने को तैयार हूँ। आप आज्ञा करें।

वशिष्ठ—धन्य हो लक्ष्मण वीर। तुम्हारे जैसे दृढ़व्रती, साहसी और सेवाभावी लोग जिस देश में होंगे वह देश धन्य होगा। मैं ऐसे लोगों का जय जयकार करता हूँ। मैं उस स्कूल की स्थापना तुमसे ही कराऊँगा। परन्तु अभी कुछ समय लगेगा। तब तक तुम आराम करो। भगवान तुम्हें चिरायु करें।

लक्ष्मण ने गुरु वशिष्ठ के चरण स्पर्श किये और मुनि का आशीर्वाद लिया। इसके बाद शांत चित से महल को प्रस्थान किया। गुरु वशिष्ठ को दृढ़ विश्वास हो गया कि भारतीय मर्यादा की रक्षा अवश्य होगी क्योंकि राम जैसा संरक्षक और लक्ष्मण जैसा दृढ़व्रती सेवाभावी सहायक का सहयोग मिल गया है। किसी भी आंदोलन की सफलता के लिये सुयोग्य नेता और उसके कट्टर समर्थकों की जरूरत रहती है।

# 8

# राम को वनवास

शाम को भरत और शत्रुघ्न भी मुनि वशिष्ठ से मिले। कुंभ की चर्चा चली तो मुनि ने कहा, "भई, आनंद आ गया। बाहर घूमने से आदमी का दिल और दिमाग तरो-ताजा हो जाता है। तुम तो कभी अयोध्या से बाहर निकले ही नहीं। तुम्हारी ननिहाल तो स्वर्ग है। बहुत ही सुंदर भूमि है। अगर धरती पर स्वर्ग है तो वह कश्मीर में है। एक बार जाकर तो देखो।"

भरत ने कश्मीर की प्रशंसा सुनी तो बोला—"माँ भी मुझे यही बता रही थीं। कल ही दोनों भाई चलते हैं। वहाँ के फल बहुत स्वादिष्ट होते हैं। स्वास्थ्य भी सुधार जायेगा।" बातचीत के बाद गुरु से आज्ञा लेकर दोनों भाई चले गये।

थोड़ी देर बाद मुनि वशिष्ठ घूमने के इरादे से बाहर निकले तो देखा कि तीन मुनि चले आ रहे हैं। मुनि ने उन्हें अपने अतिथि कक्ष में टिकाया और उनकी सेवा शुश्रूषा की व्यवस्था की। रात को सबने दूध और फलों का आहार लिया।

भोजन के बाद चारों ऋषि इकट्ठे हुए तो अगले कदम पर चर्चा चली। अत्रि मुनि बोले, "आश्रम का विस्तरण हो गया है। तीन हजार शिक्षार्थी आराम से रह सकेंगे। सौ रंगरूटों का चयन भी कर लिया है। अब प्रशिक्षक के आने की प्रतीक्षा हो रही है। उसके आते ही कार्य शुरू हो सकेगा।

विश्वामित्र—राजा दशरथ वीर बनने का दम भरता है। परंतु निशाचरों के नाम से काँपता है। वह राम को किसी

सूरत में नहीं जाने देगा। हम यह भी चाहते हैं कि दुनिया को यही खबर हो कि राम को निकाला जा रहा है। यह टेढ़ी समस्या है।

भारद्वाज—इस समस्या का एक ही समाधान है कि राम को ही समझाया जाय। वह शीलवान और साहसी युवक है। धर्म की रक्षा को तैयार हो जायेगा। फिर वह अपने पिता से लड़-झगड़ कर यहाँ से निकल ले।

विश्वामित्र—यह असंभव है। मैं राम को अच्छी तरह जानता हूँ। वह यमराज से टकरा सकता है। परंतु अपने पिता से नहीं झगड़ सकता। मर्यादा को तोड़ना उसके लिये असंभव है। वह मर्यादा-पालन का जबरदस्त हिमायती है।

वशिष्ठ—चिंता मत करो, भाइयो। मेरे पास एक उपाय है। मैं छोटी रानी से बात करूँगा। राजा ने उसे दो वरदान देने का वायदा कर रखा है। वह भरत को राज्य और राम को चौदह वर्ष का वनवास माँग लेगी। आप मेरे साथ चलें और मेरी बातों की पुष्टि करते रहें। ईश्वर ने चाहा तो कार्य सिद्ध समझो।

भारद्वाज—रानी की प्रतिष्ठा को जबरदस्त धक्का लगेगा। दुनिया उसे गालियाँ बकेगी। सारा परिवार उसे ताना मारेगा। क्या वह इस त्रासदी को झेल सकेगी ?

वशिष्ठ—रानी में अदम्य साहस और अपूर्व दृढ़ता है। धर्म पर पूरी निष्ठा भी है। हमारी बात उसकी समझ में जँच गई तो अवश्य सफल हो जायेंगे। वह बहुत विवेकशील है। उसको समझाने में हमें पूरी तैयारी करनी पड़ेगी।

वार्ता समाप्त करके ऋषियों ने संतोष की साँस ली। अगले दिन मुनि ऋषियों के साथ आश्रम से यह कहकर निकले कि वे घूमने के लिये जा रहे हैं। दो-ढाई घंटे के बाद

आश्रम लौटे तो उनका चेहरा खुशी से खिल रहा था। नाश्ता करने के बाद तीनों मुनि अपने आश्रमों को वापिस लौट गये।

संयोग ऐसा हुआ कि राजा दशरथ ने मुकुट सीधा करने के लिये दर्पण हाथ में लिया तो उसे अपने सफेद बाल दिखाई पड़े। उसे ऐसा लगा मानो बुढ़ापे ने घेर लिया है। राम को राज्यपद देकर आराम से जीवन बिताना ठीक रहेगा। यह विचार मन में आते ही राजा ने अपने मन की बात मुनि वशिष्ठ को सुनाई। बोला— "मैं बूढ़ा हो गया हूँ। अब राम को राज्य का काम-काज सौंप कर आराम से रहना चाहता हूँ। पता नहीं कब यह शरीर छूट जाये।

मुनि वशिष्ठ इसी मौके की तलाश में बैठे थे। उन्होंने अपना पंचांग-पत्रा निकाला और ग्रहों की गणना करते रहे। फिर राजा से कहा—

बेगि बिलंवु न करिअ नृप, साजिअ सबुइ समाज।
सुदिन सुमंगल तबहिं जब, रामु होहिं युवराज।।

राजन् अब देर मत करो। जल्दी ही सारा सामान जोड़ लीजिये। कल का मुहूर्त बहुत ही शुभ है। बरसों तक ऐसा शुभ मुहूर्त नहीं निकल सकता है। शुभ दिन और शुभ मुहूर्त तभी मंगलमय हो जाता है जब राम युवराज बनेंगे। यह सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ और दरबार में आकर सबको सुनाया।

जौं पांचहि मत लागे नीका।
करहु हरषि हियँ रामहिं टीका।।

अगर सब पंचों को यह मत अच्छा लगे तो कल राम को राजतिलक कर दूँ। किसी दरबारी को भला क्या एतराज था ? सबने खुश होकर स्वीकृति दे दी। बस राजतिलक की

तैयारियाँ धूमधाम से होने लगी। सारी अयोध्या में यह खबर बिजली की तरह फैल गई कि कल राम का राजतिलक होगा।

भरत और शत्रुघ्न हजारों किलोमीटर दूर कश्मीर में बैठे हैं। सीता के पिता राजा जनक को भी राजतिलक की कोई सूचना नहीं है। न राम और लक्ष्मण के मामा-नाना को कुछ खबर दी गई है। यह कैसा राजतिलक है जिसमें न कोई रिश्तेदार शामिल है और सारे घरवालों को बुलाया गया है। पर वाह रे राजा दशरथ। उसके दिल में न कुछ मलाल है और न कोई ख्याल है। बस मगन होकर तैयारियों में जुट गया है। किसी रानी को भी खबर देने नहीं गया है।

मुनि वशिष्ठ आज फूले नहीं समाते। वह कार्यकर्ताओं को कहते हैं—

ध्वज पताक तोरन कलस, सजहु तुरग रथ नाग।
सिर धरि मुनिवर वचन सबु, निज निज कारज लाग॥

कार्यकर्ता ध्यान से सुनें, "बाँस, झंडे, मालायें और कंगूरे लेकर आओ। बाँसों पर झंडे बाँधो और ऊपर कंगूरे बाँध दो। फिर उन्हें मालाओं से सजा दो। घोड़े, रथ और हाथियों को खूब सजा कर सामने खड़े कर दो।" वाह मुनीश्वर! आज आपने रंग जमा दिया। भोले राजा को समझा दिया कि आपसे ज्यादा खुशी किसी दूसरे को नहीं है।

तैयारियाँ कराके मुनि दौड़े हुए राम के महल में जा पहुँचे। राम को शुभ समाचार देकर उसे राजगद्दी मिलने की बधाइयाँ दे रहे हैं।

भूप सजेउ अभिषेक समाजू।
चाहत देन तुम्हहि युवराजू॥

राजा ने तुम्हारे राजतिलक की सारी तैयारियाँ कर ली है। कल तुम अयोध्या के राजा बनोगे। ईश्वर करे तुम यशस्वी राजा बनो।

लेकिन कल का नया सूरज नई खबर लाया है। राम को अयोध्या का राज्य नहीं मिला, किंतु वन का राज्य मिला है। इस राज्य के राजा को सोने का भारी मुकुट नहीं लादना पड़ेगा, किंतु जटाओं का कोमल मुकुट पहनेगा। उसे सिंहासन नहीं मिलेगा।, सिंह की खाल का आसन मिलेगा और मृग की छाल के सुंदर कपड़े पहनेगा। गुफाओं के महल होंगे और डालियों के पलंग होंगे। फूल मुस्करा कर स्वागत करेंगे। पक्षी गीत सुनायेंगे और हवा संगीत की तान छेड़ेंगी।

अनुसूया ने सीता को पतिव्रत धर्म की शिक्षा दी थी। वह राम के साथ वन जाने की हठ ठान बैठी। किसी के समझाने-बुझाने का असर नहीं हुआ तो राम ने उसे साथ ले जाना स्वीकार कर लिया। लक्ष्मण ने समाचार सुना तो वह राम से मिलने गया। राम के सामने जाकर हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

राम बिलोकि बंधु कर जोरें।<br>
देह गेह सब सन तृनु तोरें।।

राम ने देखा कि जिस भाई का साथ बचपन से जवानी तक अखंड रहा है, जिसने दुख-सुख में सदा साथ निभाया है, वही भाई अपने शरीर और परिवार से नाता तोड़ कर वन में भी साथ चलना चाहता है। राम दुविधा में हैं कि साथ चलने की मंजूरी दें या न दें।

राम को असमंजस में देखकर लक्ष्मण बोला, "आपका ख्याल ठीक है। मैंने शरीर का मोह इसलिये छोड़ा है क्योंकि पता नहीं यह शरीर रहे या न रहे और घर का मोह इसलिये छोड़ा है क्योंकि घर त्यागे बिना आपके साथ वन को कैसे चलूँगा ?

लक्ष्मण की बात सुनकर राम को आश्चर्य हुआ। फिर लक्ष्मण को समझाया, "प्यारे भाई! वन जाने का आदेश माता-पिता ने मुझे दिया है, तुम्हें नहीं। तुम्हें तो माता-पिता की सेवा के लिये घर में रहना चाहिये। तुम्हारे वन जाने की क्या तुक है ? तुम्हें इस कठिन समय में मेरे प्रेम का मोह छोड़ना चाहिये। यही समय की माँग है। समय की माँग पहचानो, मेरे भाई।"

राम की बातें सुनकर लक्ष्मण को हँसी आई। वह बोला— "भैया, आप बहुत उदार हैं। दूसरों में गुण देखते हैं, उनके दोषों पर ध्यान ही नहीं देते। क्या आपको पता है कि आपको वनवास क्यों मिला है ?" राम ने उत्तर दिया, "मैं तो यह जानता हूँ कि छोटी माँ ने मेरा कुछ भला ही सोचा होगा। छोटी माँ मुझसे बहुत प्यार करती हैं। वे मेरा बुरा सोच नहीं सकतीं। ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। तुमने यह प्रश्न क्यों उठाया है ? क्या तुम इस बारे में कुछ जानते हो ?"

लक्ष्मण—मैं जानता तो नहीं, परंतु बिखरे तारों को जोड़कर अनुमान लगा रहा हूँ। मुनि विश्वामित्र ने हमें युद्धनीति की ऐसी बातें सिखाई थीं जिनका उपयोग क्रूर निशाचरों से लड़ने में ही हो सकेगा। कल ही गुरु वशिष्ठ ने मुझे पूछा था कि क्या मैं किसी सैनिक स्कूल में प्रशिक्षण

देने जा सकूँगा ? मैंने उन्हें अपनी स्वीकृति दे दी है। मुझे अपना प्रण निभाना है।

राम—बड़ी दूर की कौड़ी लाये हो भाई। क्या छोटी माँ भी इन सब बातों में शामिल हैं ? यह सारी कहानी केवल तुम्हारी कल्पना की उपज है ?

लक्ष्मण—मंथरा ने एक दासी को बताया था कि कल गुरु वशिष्ठ कुछ साधुओं को लेकर छोटी माँ से मिले थे। उन्होंने क्या खिचड़ी पकाई होगी, वह आपके सामने आ गई। क्या अब भी आपको मेरी बात पर संदेह है ?

राम—अगर ऐसा है, तो मुझे अपने भाग्य पर गर्व है। यदि ईश्वर मनुष्य को किसी शुभ कर्म का निमित्त बनाता है तो उसे भगवान को धन्यवाद देना चाहिए। अच्छा भाई, जाओ। अपनी माता से आज्ञा लेकर आओ। हमें मर्यादा का पालन अवश्य करना चाहिये। हम जैसा आदर्श बनायेंगे, लोग उसी तरह चलेंगे।

अब लक्ष्मण खुश होकर अपनी माँ के पास आया और वन जाने की आज्ञा माँगी। नीति कहती है कि जब बेटा सोलह वर्ष का हो जाय तो उससे मित्र की तरह बर्ताव करो। सुमित्रा नीति-निपुण थी। बोली

तुम्हरेहिं भाग रामु बन जाहीं।
दूसर हेतु तात कछु नाहीं॥

धन्य हो माता सुमित्रा। कहती है बेटा, तुम्हारे सौभाग्य से ही राम को वनवास मिला है। वहाँ पर वनवासियों की सेवा का मौका मिलेगा। सेवा मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ धर्म है। वनवासी दुखी हैं, निशाचर उन्हें सताते हैं। दुखी लोगों की सेवा भाग्यशालियों को मिलती है। सचमुच ही तुम भाग्यशाली

हो। अयोध्या में रहते तो ऐसा मौका नहीं मिलता। अब राम तुम्हारे पिता हैं और जानकी तुम्हारी माँ हैं। तुम हमारी याद मत करना।

इन अनमोल वाक्यों ने लक्ष्मण का उत्साह बढ़ा दिया। वह माँ के बड़प्पन को याद करता हुआ राम के साथ जा मिला।

धन्य है भारत भूमि जहाँ पर मातायें अपनी संतान को सेवा करने की प्रेरणा देती हैं।

# 9

# सैनिक शिक्षा का गुप्त आयोजन

'निकसि वशिष्ठ द्वार भए ठाढ़े'। राम, सीता और लक्ष्मण वन जाने को घर से निकले और गुरु वशिष्ठ के दरवाजे पर खड़े हो गये। क्यों ? राम अब किसी के घर में नहीं घुस सकते। लेकिन गुरु से पूछना था कि कहाँ जाना है। वन तो पश्चिम में भी थे और उत्तर में भी थे। गुरु ने उन्हें दक्षिण में जाने का सुझाव दिया। ठीक स्थान पर पहुँचाने का कार्य भरद्वाज करेंगे। इसलिये, पहले प्रयाग पहुँचो।

'तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए'। भरद्वाज के पास लक्ष्मी बरसती थी। बड़ा तीर्थ होने के कारण प्रयाग में कोई न कोई सेठ, साहूकार, राजा, जमींदार या अन्य भक्त आता रहता था और मुनि के आश्रम में भेंट देता था। मुनि ने सैनिक स्कूल के लिये धन दिया और चार शिष्यों को साथ कर दिया। शिष्य उन्हें चित्रकूट पहुँचाने के लिये चल पड़े। 'प्रमुदित हृदय चले रघुराई।'

चित्रकूट बहुत सुंदर स्थान है। विंध्याचल की पहाड़ियों में प्राकृतिक गुफाएं हैं जिनमें हजारों लोग आराम से छिप सकते हैं। पास ही मंदाकिनी नदी बहती है जिसका शीतल जल मन को शांत कर देना है। भूमि पर तरह-तरह के पेड़-पौधे छाये हुए हैं। पेड़ों पर नीलकंठ, कोयल, तोते, पपीहे, चकोर आदि पक्षी बैठकर मधुर गान करते हैं तो मन मोहित हो जाता है। हाथी, बंदर, सूअर और हिरन आदि वन्य पशुओं की वन में बहुतायत है। अत्रि मुनि ने इसी स्थान पर अपना आश्रम बनाया है।

अत्रि मुनि ने राम, सीता और लक्ष्मण को कामेत पर्वत पर ठिकाना दिया। यह सबसे सुरक्षित स्थान था। ऊँचा होने के कारण वन्य पशु यहाँ नहीं पहुँचते थे। फिर भी लक्ष्मण रोज पहरा देते थे। कामेत पर्वत पर इतनी जगह नहीं थी कि रसोई बन सके। इसलिये, राम ने रहने के लिये दूसरी पहाड़ी चुनी और कामेत सेना का मुख्यालय बना।

राम-लक्ष्मण के आने की खबर वनवासियों को मिली तो वे राम के दर्शन करने के लिये आने लगे। वे पत्तों के बने दोने में कंद मूल और फल भरकर लाते थे और भेंट स्वरूप राम के आगे रख देते थे। वे सब यही कहते थे—

अब हम नाथ सनाथ सब, भए देखि प्रभु पाय।
भाग हमारे आगमनु, राउर कोसलराय।।

राम समझ गये कि यह सब अत्रि मुनि की करामात है। इसलिए, ऐसा आदर पैदा कराने का कारण पूछा। तब मुनि ने समझाया कि यह रंगरूटों को भरती करने की तरकीब है। जो युवक सीखने आयेंगे उनमें से अच्छा चुनाव हो सकेगा। इससे दूसरा लाभ यह होगा कि सीखने वाले युवक मन लगाकर सीखेंगे। गुरु में श्रद्धा नहीं होगी तो ज्ञान अधकचरा रहेगा। नीति बताती है कि श्रद्धा रखने वाले व्यक्ति को ही ज्ञान प्राप्त होता है।

सेना में भरती के लिये आये युवकों में से पाँच सौ रंगरूट भर्ती किये गये। इनको सिखाने का भार लक्ष्मण ने उठाया। सौ-सौ रंगरूटों के पाँच दल कायम हुए। प्रत्येक दल को आधा घंटे का शारीरिक श्रम और एक घंटे कवायद करनी पड़ती थी। शाम को खेल कूद होता था। महीने में दो बार परेड और एक बार लंबी दूरी का कूँच (रूट मार्च) होता था। लक्ष्मण की पैनी निगाह उन जवानों

के नाम नोट करती रही जो इस अभ्यास में सबसे बढ़कर थे। इस प्रकार कुल पचास जवान छाँटे गये जो नायक बनने के योग्य थे।

नायकी के योग्य बहादुरों की जिम्मेदारी राम को सौंपी गई। राम ने उन्हें घुड़सवारी, पेड़ पर चढ़ना, पत्तों में छिपना, दीवार पर चढ़ना, लंबी दौड़ जैसे साहसिक कार्यों का अभ्यास कराया। इसी बीच शस्त्रास्त्रों की खेप आ पहुँची। अब शस्त्र चलाना और निशानेबाजी का अभ्यास शिक्षा के मुख्य अंग बने। धीरे-धीरे सैनिक शस्त्र-संचालन में पूरी तरह निपुण बन गये। छः वर्ष की अवधि बात ही बात में बीत गई। व्यस्तता जीवन को सहज बना देती है।

अब अत्रि मुनि ने राम और लक्ष्मण को समझाया कि सैनिकों को समुद्र पार करना पड़ेगा। समुद्र में शत्रु की जल सेना गश्त लगाती होगी। उसकी निगाह से बच निकलने की तकनीक सीखनी होगी। नौ सेना की तकनीकों के जानकार मुनि अगस्त्य हैं। वे दंडकवन में रहते हैं। उनका आश्रम पंचवटी में है। इसलिये, आप लोगों को अपनी फौज के साथ पंचवटी जाना होगा। कुछ सैनिक अगस्त्य मुनि ने भेजे हैं वे आपको पंचवटी तक ले जायेंगे।

मुनि अगस्त्य ने जो रंगरूट भेजे थे उनमें दो बहुत चतुर थे। उनके नाम थे नल और नील। ये दोनों राम और लक्ष्मण की सेना को सीधे मार्ग से पंचवटी ले चले। घने वन, दुर्गम घाटियों और नदियों को पार कराते हुए दंडकवन में प्रवेश किया। वहाँ गोदावरी नदी के किनारे मुनि अगस्त्य का आश्रम था। नल-नील ने राम लक्ष्मण को मुनि से मिलवाया। राम ने मुनि को अपनी समस्या बताई—

तुम्ह जानहु जेहि कारन आयउं।<br>
ताते तात न कहि समझाउं।।

अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही।
जेहि प्रकार मारौं मुनि द्रोही।।

मुनिवर, हमें वह विद्या सिखा दीजिये। जिससे निशाचरों पर विजय मिल सके।

मुनि अगस्त्य ने उन्हें पंचवटी पर ठहरने की सलाह दी और वहाँ के राजा जटायु से मुलाकात कराई। जटायु को निशाचर परेशान करते थे और उसे गिद्ध राजा कहते थे। राम, लक्ष्मण से मिलकर जटायु बहुत खुश हुआ। उसने पंचवटी में रहने के लिये घर बनवा दिया। लक्ष्मण ने जटायु की सेना को सैनिक शिक्षा देना शुरू कर दिया।

गीधराज से भेंट भइ, बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ।
गोदावरी निकट प्रभु, रहे परन गृह छाइ।।

लक्ष्मण राजा जटायु की फौज को प्रशिक्षण देने में व्यस्त हो गया तो राम ने शिकार खेलना शुरू कर दिया। सीता के लिये मृगछाल का सुंदर बिछौना बनवाया ताकि पत्तों की डंठलों से मिलने वाला कष्ट दूर हो सके।

इधर मुनि अगस्त्य ने फौज को पहले तैराकी सिखाई। डुबकी लगाकर भीतर तैरते हुए सौ मीटर दूर निकलना इस ट्रेनिंग की मुख्य कला थी। फिर डोंगियां, नाव खेने के डाँड़ और दिशा बदलने में काम आने वाली पतवार आदि चीजों को तैयार करना और उपयोग करना सिखाया। इसके बाद विश्वामित्र मुनि के आश्रम से आगे हुए उन हथियारों का प्रयोग सिखाया जिनकी सहायता से सील आदि जल-व्याघ्रों को मारने की क्षमता पैदा होती है। अंत में उन्होंने नल को नौबलाध्यक्ष नियत कर दिया। नील को नौपति मुकर्रर किया क्योंकि वह नौ-परिवहन का विशेषज्ञ था और जरूरत पड़ने पर नावों का पुल बना लेता था।

इस ट्रेनिंग में तीन वर्ष लगे। अब राम की सेना थल-युद्ध और जल-युद्ध दोनों विधाओं में दक्ष बन चुकी थी। लक्ष्मण ने जटायु की सेना को थलयुद्ध में प्रवीण बना लिया था। राम ने इस तैयारी से पूर्ण संतुष्टि महसूस की।

इसी समय रावण ने युद्ध के बीज बो दिये। वह गीधराज जटायु को धमकाने आया था। संयोग से उसने पंचवटी में सीता को देखा। उस समय राम शिकार को गये थे और लक्ष्मण दरवाजे पर पहरा दे रहा था। रावण ने 'हाय लक्ष्मण, हाय लक्ष्मण' की दुखभरी आवाज लगाई। सीता ने समझा कि राम खतरे में हैं। अतः उसने लक्ष्मण को जबरदस्ती राम की मदद को भेजा। सीता को अकेली पाकर रावण ने उसे अपने रथ में बिठाया और भागा। सीता जोर-जोर से रोने लगी। जटायु ने उसकी आवाज पहचान ली। वह रावण पर आक्रमण कर बैठा। परंतु रावण के सामने टिकने लायक बल उसमें नहीं था। रावण ने जटायु के दोनों हाथ काट डाले। खून बहने से उसका प्राणांत हो गया।

इस घटना ने राम के हाथ में एक बहाना दे दिया ताकि वह रावण से युद्ध को सही ठहरा सकें। अत्याचारी का वध आवश्यक हो गया।

# 10

# सुदूर दक्षिण में पड़ाव

राम और लक्ष्मण अपनी कुटी में लौटे तो सीता को गायब पाया। उसे ढूँढने निकले। रास्ते में जटायु मरणासन्न पड़ा था। उसके मुँह में पानी डाला तो उसे कुछ होश आया। उसने बता दिया कि सीता को रावण जबरदस्ती खींच कर ले गया है।

लै दच्छिन दिसि गयउ गोसाईं
बिलयति अति कुररी की नाईं॥

'सीता जार-जार हो रही थी जैसे टिटिहरी चिड़िया टें-टें करती है।' कहते-कहते जटायु मर गया।

शत्रु का पता चल गया। यह दुष्ट भारतीय संस्कृति का कट्टर विरोधी है। भारतीय संस्कृति के जीवन-प्राण ईश्वर में समाये हैं। ईश्वर-भक्ति का अर्थ है— सदाचरण और कर्तव्य-पालन। ये दो तत्व ही भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। रावण घोर दुराचारी है। निस्सहाय वनवासियों को लूट-खसोट कर अपना घर भरता है। उनके राजाओं को भालू या बंदर बता कर उनका अपमान किया करता है। गुरु विश्वामित्र की युद्धनीति अपना कर इस महाअभिमानी का सिर कुचलूँगा।

यह सोचकर राम और लक्ष्मण ने दक्षिण की ओर कदम बढ़ाये अब उनका उद्देश्य दक्षिण के राजाओं को अपनी तरफ मिलाना था। अगस्त्य मुनि ने एक बार उन्हें बताया था कि किष्किंधा के राजा का भाई सुग्रीव ऋष्यमूक

पर्वत की गुफाओं में छिप कर रहता है। उससे मेल-जोल बढ़ाना फायदे का सौदा रहेगा। राम और लक्ष्मण ने पहले वहीं चलने का मन बनाया।

सुग्रीव ने देखा कि लम्बे-तगड़े और पुष्ट शरीर वाले दो वीर पुरुष ऋष्यमूक पर्वत के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहे हैं। देखते ही उसकी रूह काँप गई। उसने अपना जीवन खतरे में समझा। घबरा कर बोला

पठए बालि होहिं मन मैला।
भागौं तुरत तजौं यह सैला।।

हनुमान भाई, जाओ और पता करो कि ये कौन हैं। अगर बालि ने मुझे मारने की नीयत से इन्हें भेजा है तो मैं इस पर्वत को छोड़कर भाग जाऊँगा। पता लगाकर इशारे से मुझे सूचना अवश्य दे देना।

हनुमान ने बड़ी चतुराई से बातचीत की। उनका पता पूछने पर मालूम पड़ा कि वे मुसीबत के मारे हुए हैं तो उनसे दोस्ती करने में भलाई समझी। इसलिये अनुनय-विनय करके दोनों भाइयों को सुग्रीव के पास पहुँचाया। वहाँ पर दोनों की दोस्ती करा दी।

तब हनुमंत उभय दिसि, की सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि, जोरी प्रीति दृढ़ाइ।।

इस दोस्ती में दोनों का फायदा है। आप बालि को मार दीजिये तो सुग्रीव राजा बन जायेगा। फिर सुग्रीव अपनी सेना लेकर सीता को ढूँढ निकालेगा। दोनों पक्ष राजी हो गये तो आग को सामने रखकर दोनों ने अटूट मित्रता की शपथ ले ली।

सुग्रीव के मन में बाली का डर बुरी तरह जमा हुआ था। सोच रहा था कि बाली ने रावण का भी मुकाबला

किया है और उससे अपने राज्य की रक्षा की है। पता नहीं कैसे मरेगा। वह राम और लक्ष्मण के पास गया और बोला कि बाली से लड़ने की योजना बना लीजिये।

कह सुग्रीव सुनहु रघुवीरा।
बालि महाबल अति रनधीरा।।

लक्ष्मण को सुग्रीव की बात नीति-सम्मत लगी और कहा कि "बाली शूरवीर है। उसके साथ आमने-सामने की लड़ाई करना ठीक नहीं। उसे धोखे से मार डालना चाहिये। यही गुरु विश्वामित्र ने सिखाया है कि मौके के अनुसार चलो। यही वक्त का तकाजा है।"

तब राम ने कहा कि "बाली शूरवीर जरूर है। परंतु क्या तुम मेरा बल उससे कम आँकते हो ? मुझे पूरा विश्वास है कि मैं बाली को जिंदा नहीं छोड़ूँगा। तुम्हारी क्या राय है ?"

लक्ष्मण ने कहा, "मुझे आप पर पूरा भरोसा है। परंतु बाली हमारा शत्रु नहीं है। हमें अपनी शक्ति का उपयोग रावण के विरुद्ध करना है। लड़ाई का कुछ भरोसा नहीं होता। जरा सी चूक होने पर बलवान भी मात खा सकता है। फिर कमजोर से कमजोर शत्रु को हराने के लिये पूरा बल लगाना चाहिये। मान लीजिये थोड़ी सी असावधानी हुई और शत्रु ने आपको घायल कर दिया तो हम कहाँ इलाज करायेंगे। यहाँ ऋषि मुनियों का सहारा भी नहीं है। मेरी राय यही है कि सुग्रीव को भेजा जाय और वह बाली को युद्ध के लिये ललकारे। आप कहीं छिप कर बैठे रहे और मौका देखते ही शत्रु का बध कर दें। इसी में हमारा भला है।

सुग्रीव को लक्ष्मण की योजना पूर्णतया समयानुकूल लगी। उसने राम से हाथ जोड़ कर प्रार्थना की, "प्रभो! लक्ष्मण भाई ठीक कहते हैं। बाली का बध सुनिश्चित हो

जायेगा तभी मैं बाली को ललकार सकता हूँ। अन्यथा बाली के हाथों मेरी मृत्यु हो जायेगी और आपका कार्य अधूरा रह जायेगा।

राम को अपने बल पर विश्वास था। परंतु दो साथियों की राय मानना ही उचित समझा। वह एक पेड़ की ओट लेकर बैठ गये। सुग्रीव ने बाली को युद्ध के लिये ललकारा। बाली युद्ध के लिये आया और राम के बाण से मारा गया।

बाली के मरते ही सुग्रीव ने राम से प्रार्थना कि उसे राजपद दे दिया जाय।

राम कहा अनुजहि समुझाई।
राज देहु सुग्रीवहिं जाई।।

राम स्वयं किसी गाँव में नहीं घुसते थे। मर्यादा-पालन उनका स्वभाव बन गया था। लक्ष्मण ने सब सभासदों को बुलाया और सुग्रीव को राजा बना दिया। अब राम ने अपनी सेना को भी किष्किंधा में बुला लिया। अब ऋष्यमूक पर्वत राम की सेना का मुख्यालय बन गया। यहाँ पर रसद और शस्त्रास्त्र का गोदाम बनाया गया। इससे आगे की चौकी समुद्र के किनारे स्थापित करने का निर्णय हो गया।

# 11

# महापातकी का महाविनाश

राम को पता चला कि विभीषण रावण का सौतेला भाई है और इसके पिता, विश्वश्रवा ने उसे लंका के पश्चिमी किनारे पर अलग जागीर दी थी। उस जागीर की व्यवस्था विभीषण ही करता है। खबर सुनते ही राम के कान खड़े हो गये। तत्काल लक्ष्मण को बुलवाया और उसे यह खबर सुनाई।

खबर सुनकर लक्ष्मण बोला, "खबर कह रही है कि दोनों भाइयों का मन फटा हुआ है। अन्यथा पिता को अलग जागीर देने की जरूरत नहीं पड़ती। टूटे दिल जुड़ेंगे भी, तो उनमें गाँठ जरूर रह जायेगी। भेद नीति को अपनाने का अच्छा मौका है। परंतु आदमी ऐसा हो जो बहुत सावधान और चतुर हो।"

राम ने कहा, "उस घटना को याद करो जब हम दोनों ऋष्यमूक पर्वत के पास आकर ठहरने की जगह ढूँढ रहे थे। उस समय हनुमान ने हमारा पता कैसी चतुराई से पूछा था। फिर कितनी नम्रता दिखा कर हमें सुग्रीव के पास ले गया था। क्या वह आदमी विभीषण से बात करने के लिये ठीक रहेगा ?"

लक्ष्मण—"आप बहुत दूरदर्शी हैं, भैया। हनुमान बहुत चतुर है। आपने सही आदमी का चुनाव किया है। उसकी नीति-निपुणता देखकर मैं भी दंग रहा गया था। परंतु उसे सीता को खोजने के बहाने से भेजना चाहिये। लोगों को असली मुद्दे की भनक नहीं लगनी चाहिये।

अब राम ने सुग्रीव को संदेशा भेजा कि सीता को खोज करने का उपाय कराओ। सुग्रीव ने नील, अंगद, जामवंत और हनुमान को चुना।

सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू।
सीता सुधि पूंछेहु सब काहू।।

ये सब योद्धा राम के पास आज्ञा माँगने गये। हनुमान सबसे बाद में गये और राम के चरणों में सिर नवाया। राम ने उसे विभीषण से मिल आने की योजना समझाई और उसके सिर पर हाथ रख के आशीर्वाद दिया। हनुमान बहुत खुश हुआ। उसे अपनी योग्यता दिखाने का मौका मिला था।

चलते-चलते चारों वीर समुद्र के किनारे पहुँचे समुद्र की विशालता देख कर उनकी हिम्मत टूट गई। केवल हनुमान ही समुद्र पार जाने को तैयार हुए। वह अपनी नाव लेकर समुद्र में कूद पड़े। रास्ते में अनेक बाधायें आईं। कहावत है कि 'हिम्मते मरदां मददे खुदा'। जो आदमी हिम्मत करता है भगवान उसकी सहायता अवश्य करता है। सारी विघ्न-बाधाओं को पार करके हनुमान ने लंका में प्रवेश किया। आते ही सबसे पहले महत्व के अनुसार अपने कार्यों का क्रम निश्चित किया।

1. सबसे पहले राम की सेना के उतरने के लिये सुरक्षित स्थान खोजना।

2. विभीषण से मुलाकात करके उसे प्रभावित करना।

3. सीता के दर्शन करना और सांत्वना देना।

4. शत्रु के नजदीकी लोगों को गुमराह करना।

सुरक्षित पोताश्रय सौभाग्य से विभीषण की जागीर में ही मिल गया। इसके बाद हनुमान ने राजधानी में विभीषण का घर ढूँढा और भेद नीति द्वारा उसे अपने पक्ष में मोड़

लिया। सीता से मुलाकात के बाद तीन लोगों को प्रभावित करने में सफलता मिली। एक थी त्रिजटा जो सीता पर पहरा देने वालों की मुखिया थी। दूसरी थी रावण की पत्नी मंदोदरी और तीसरा शिकार बना रावण का बूढ़ा मंत्री माल्यवान।

हनुमान को अब लौटने की जल्दी थी। बड़ी तेजी से कदम बढ़ाये। किष्किंधा पहुँच कर सुग्रीव को सब समाचार सुनाया क्योंकि नीति के अनुसार अपने उच्च अधिकारी को ही सबसे पहले अपने कार्यकलाप की खबर देनी चाहिये। वहाँ से सुग्रीव अपने मंत्रियों सहित राम के पास गया और समाचार सुनाया कि हनुमान ने लंका में आग लगा दी है। समाचार सुनकर दोनों भाई बहुत खुश हुए। वे समझ गये कि आग लगाने का अर्थ लोगों में ईर्ष्या पैदा करना है।

राम के मन में यह जिज्ञासा उठी कि रावण के वफादारों को किस तरकीब से भड़काने में सफल हुआ। "केहि बिधि दहेउ दुर्ग अति बंका ?"

तब हनुमान ने बताया कि उसने शरीर पर लाल गेरू पोत लिया, लाल रंग के कपड़े पहन लिये और सिर पर त्रिपुंड लगा लिया ताकि लोग उसे शिव का भक्त समझें। फिर एक मंदिर में ज्योतिषी बनकर बैठ गया।

नांघि सिंधु हाटक पुर जारा।<br>
निसिचर गन बधि विपिन उजारा।।<br>
सो सब तव प्रताप रघुराई।<br>
नाथ न कछु मोरी प्रभुताई।।

मैंने सुरक्षित रहकर समुद्र को पार किया, लंका में आग लगाई, निशाचर मारे और फल खाकर उनका बाग उजाड़ दिया। ये सारे कार्य आपकी कृपा से ही पूरे हुए। इसमें मेरी बहादुरी कुछ नहीं है। मैं तो साधारण व्यक्ति हूँ।

हनुमान का नम्र उत्तर सुनकर लक्ष्मण ने कहा, "भाई हनुमान तुम धन्य हो। अपने वीरता और चतुरता पूर्ण कार्यों का श्रेय खुद नहीं लेते, किंतु राम की कृपा का फल समझते हो। आप में लेश मात्र भी अभिमान नहीं है। आप ज्ञानवान कर्मयोगी की भाषा बोल रहे हैं। हम अच्छी तरह समझ गये कि आप जीवन मुक्त महापुरुष हैं। जो व्यक्ति आपकी कीर्ति का गान करेगा, उसका हृदय पवित्र हो जायेगा और स्वयं यशस्वी बनेगा।"

अब राम ने सुग्रीव से कहा, "वानरराज, इस समय लोहा गरम है। फौज को कूँच करने ही आज्ञा दो। लोगों का जोश ठंडा मत होने दो।"

अब बिलंबु केहि कारन कीजे।<br>
तुरत कपिन्ह कहूं आयसु दीजै॥

सुग्रीव की आज्ञा पाते ही सेना चल पड़ी और समुद्र के किनारे पर पड़ाव डाल दिया। लोगों को देखा कि मैनाक पर्वत भी समुद्र में डूबा पड़ा है। यहाँ नावों को सावधानी से चलाना पड़ेगा। अन्यथा जलद्रोणियों से पानी निकालते-निकालते नाक में दम आ जायेगा।

फौज नावों को बनाने में व्यस्त थी। राम और सुग्रीव आदि युद्ध के बारे में चर्चा कर रहे थे। सुग्रीव के शंकाशील मन को समझाते हुए राम ने आश्वासन दिया था—

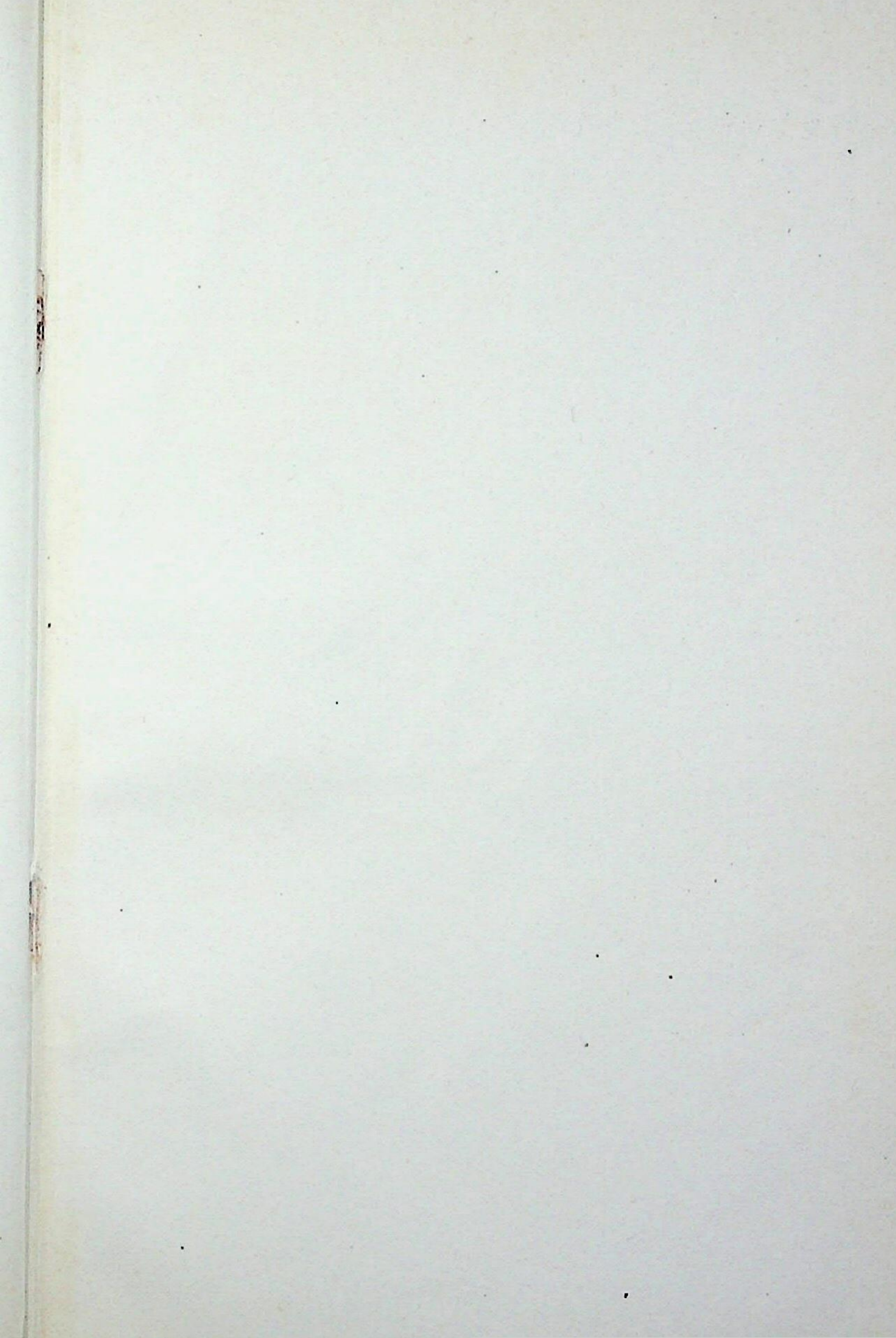
जग महुं सखा निसाचर जेते।<br>
लछिमनु हनइ निमिष महुं तेते॥

परन्तु लक्ष्मण अपनी सेना के लंका तट पर सुरक्षित उतरने के बारे में विचारमग्न था। कई विचार उठ रहे थे। हो सकता है हमारे उतरने की जगह के आसपास रावण की चौकी हो। शत्रु हमारी गतिविधि देख लेगा और हम मुसीबत में फंस जायेंगे। हो सकता है रावण का दूत हमें समुद्र में

उतरता देख ले और शत्रु तक खबर पहुँचा दे। हमें विभीषण से पूछकर आगे कदम बढ़ाना चाहिये। यह सोचकर उसने राम से कहा, "भैया हमें विभीषण की सलाह के अनुसार चलना चाहिये। आप उसके पास कोई दूत भेजें और सबसे यह कहें कि दूत रावण के पास भेज रहे हैं।" राम को लक्ष्मण की सलाह पसंद आई और उन्होंने अंगद को समझा-बुझाकर विभीषण के पास भेज दिया।

विभीषण की सलाह पर राम की सेना सोमवार को समुद्र में उतरी। सोमवार के दिन निशाचर शिव की पूजा-अर्चना किया करते थे। फिर लंका के समुद्र तट के सहारे-सहारे चलते गये। उतरने की जगह पर विभीषण की नाव खड़ी मिली और वहीं से सेना ने लंका में प्रवेश किया। रात के अंधेरे में राजधानी पर धावा बोला। रावण असावधान था। थोड़ी-बहुत सेना लेकर मुकाबला करने आया। घमासान युद्ध में लक्ष्मण ने मेघनाद को मार गिराया। रावण और कुंभकर्ण ने राम पर हमला कर दिया। परंतु विभीषण के विश्वस्त सिपाहियों ने पीछे से रावण को घेर लिया। अब राम ने मौके का लाभ उठाया और कुंभकर्ण को मारने के बाद रावण का सिर काट डाला। अत्याचारी का सर्वनाश हो गया।

लंका का राज्य विभीषण को मिला। परंतु बदनामी भी उसके गले बँध गई। लोग उसे घर का भेदी कहकर चिढ़ाते थे। लोग कहने लगे "रहना अच्छा भाइयों में चाहे बैर भले ही होय।"



# महान कर्मवीर लक्ष्मण

## पुस्तक - परिचय

प्रस्तुत पुस्तक किशोर विद्यार्थियों के लिये गागर में सागर की तरह अत्यन्त उपयोगी है। किशोर छात्र -छात्रायें जीवन के लिये उपादेय ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों को हृदयंगम करके सफलता की सीढ़ियों पर चढ़ते चले जायेंगे और जीवन को धन्य बना लेंगे। एक कर्मठ व्यक्ति को कैसी अभिवृत्तियाँ अपनानी चाहिए यह पहले अध्याय में सुमित्रा के माध्यम से भली-भाँति समझाया गया है। प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना होने पर क्या मनोभाव हों, यह आठवें अध्याय में पेश किया गया है।

ज्ञान को तीन भागों मे बाँटा गया है। शैशव काल की चरित्र शिक्षा अध्याय दो में समझाई गई है। बाल्यकाल और पूर्वकालिक किशोर अवस्था के लिये ज्ञान देने का सही स्वरूप प्राचीन संस्कृति के अनुरूप है जिसका प्रतिपादन जानडमूई और महात्मा गांधी ने किया था। यह स्वरूप अध्याय तीन में प्रस्तुत किया गया है। व्यवसाय के लिये जीवन निर्वाह की शिक्षा का स्वरूप अध्याय चार में है।

वाचन, श्रवण और लिफाफा देख कर खत का मजमून भाँप लेने के कौशलों का विवेचन अध्याय छः में किया गया है। श्रवण कौशल पर विशेष ध्यान दिया गया है। श्रवण कौशल के लिये धैर्य, अक्रोध और पूर्वाग्रहों का त्याग अत्यन्त आवश्यक गुण बताये गये हैं।

## लेखक - परिचय

**डा॰ रामस्वरूप वशिष्ठ** : सरल भाषा और प्रभावपूर्ण शैली में विषय का रोचक वर्णन करने में सिद्धहस्त लेखक का नाम है डा॰ रामस्वरूप वशिष्ठ। लेखन-काल के प्रारंभ में भूगोल विषय पर दर्जनों पुस्तकें लिखीं। 'भूगोल के भौतिक आधार' पुस्तक को उत्तर प्रदेश सरकार ने सर्वश्रेष्ठ घोषित करके पुरस्कृत किया। फलतः साहित्य अकादमी की लेखक-सूची में लेखक का नाम भी शामिल हो गया।

इसके बाद डा॰ वशिष्ठ ने विज्ञान-गल्प पर सात पुस्तकें लिखी। 'पत्थर-पुराण' नामक पुस्तक को भारत-सरकार ने वर्ष की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक घोषित करके पुरस्कृत किया। इसके बाद व्यंग्य, साहित्य, मनोविज्ञान, खगोल, धर्म और चरित्र-शिक्षा पर आपने विविध विषयों पर लेखनी उठाई। व्यंग विषय पर चौपाल के रेडियो से, साहित्य में एक अभिमानी राजा और तीन वरदान, धर्म पर गीता की चमत्कारी शिक्षा और चरित्र-शिक्षा पर कैकेयी अधिक सराही गई। चरित्र-शिक्षा पर आपकी तीन पुस्तकें कर्मवीर लक्ष्मण, सेवाव्रती महावीर हनुमान और अवनति-नाशक श्रीकृष्ण युगान्तरकारी पुस्तकें है। ये सभी पुस्तकें किशोर विद्यार्थियों और युवा-पाठकों पर विशेष प्रभाव डालेंगी।




पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी (प्रा.) लि.